मण्डल प्रकाशन - 233

हमारे जीवन की नई कहानियाँ

लेखिका :
कमला हणवन्तमल सुराणा

सम्पादक :
डॉ. धर्मचन्द जैन

प्रकाशक
सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल
(संरक्षक : अ. भा. श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ)

मण्डल प्रकाशन–233

हमारे जीवन की नई कहानियाँ

(माँ! कुछ लिखो ना)

लेखिका

श्रीमती कमला हणवन्तमल सुराणा

सम्पादक

डॉ. धर्मचन्द जैन

प्रकाशक

सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल

(संरक्षक : अखिल भारतीय श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ)

पुस्तक :
हमारे जीवन की नई कहानियाँ
(माँ! कुछ लिखो ना)

प्रकाशक :
सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल
सुबोध बॉयज सीनियर सैकेण्डरी
स्कूल के ऊपर, बापू बाजार,
जयपुर-302003 (राज.)
0141-2575997
sgpmandal@yahoo.in

प्रथम संस्करण : 2021
आचार्य श्री हस्ती दीक्षा शताब्दी
सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल का हीरक वर्ष

मुद्रित प्रतियाँ : 2100

लेज़र टाइपसैटिंग
सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल

मूल्य : **40/-** (चालीस रुपये)

मुद्रक :
डॉयमण्ड प्रिंटिंग प्रेस, जयपुर

अन्य प्राप्ति-स्थल :

- **श्री धीरजजी डोसी**
  श्री स्थानकवासी जैन स्वाध्याय संघ
  सामायिक स्वाध्याय भवन, प्लॉट नं. 2,
  कुम्हार छात्रावास के सामने, नेहरू पार्क,
  जोधपुर-342003 (राजस्थान) फोन
  0291-2624891 मो. 9462543360

- **पदमचन्दजी कोठारी**
  7 बी, 'सत्त्व', श्रेयस को.आ. स्टोर के
  सामने, नारायण नगर रोड़, शान्तिवन,
  पालड़ी, **अहमदाबाद-380007**
  (गुजरात) माबाइल 9429303088

- **श्री नवरतनजी भंसाली**
  द्वारा : महेश इलेक्टिकल्स, 14/5,
  बी.वी.के. अय्यगंर रोड़, **बेंगलुरु-560053** (कर्नाटक) मोबाइल
  09844148943

- **श्री प्रकाशजी सालेचा**
  16/62, चौपासनी हाउसिंग बोर्ड,
  जोधपुर-342003 (राजस्थान) मो.
  9461026279

- **श्री मनोजजी संचेती**
  आर. सी. बाफना स्वाध्याय भवन के
  सामने, व्यंकटेश मन्दिर के पीछे,
  गणपति नगर, **जलगाँव-425001**
  (महाराष्ट्र) मो. 9422591423

प्रकाशकीय

सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल, जयपुर 'आचार्य श्री हस्ती दीक्षा शताब्दी' एवं सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल की स्थापना के 'हीरक वर्ष' के अवसर पर श्राविकारत्न श्रीमती कमला हणवन्तमलजी सुराणा की कृति 'हमारे जीवन की नई कहानियाँ' प्रकाशित करते हुए प्रमोद का अनुभव करता है।

इन कहानियों में नई बाल पीढ़ी एवं किशोर पीढ़ी के जीवन को सही दिशा प्रदान करने की विशिष्ट दृष्टि विद्यमान है। समाज में इस प्रकार की कथाओं का अभाव अनुभव किया जा रहा था कि ऐसी कहानियों की रचना हो जो कहानियाँ नई पीढ़ी की रुचि के अनुकूल हों तथा जिन्हें पढ़कर यह पीढ़ी एक ताज़गी का अनुभव करने के साथ जीवन को जीने की दृष्टि भी प्राप्त करे। उस अभाव की किञ्चित् पूर्ति इस पुस्तक से हो रही है। श्रीमती कमलाजी सुराणा की ये कहानियाँ जिनवाणी हिन्दी मासिक पत्रिका में समय-समय पर प्रकाशित होती रही हैं। उन्हें संकलित कर पुस्तकाकार स्वरूप प्रदान किया गया है।

श्रीमती कमलाजी एक धर्मनिष्ठ श्राविका होने के साथ रचनाकार भी हैं। उन्होंने जैन परम्परा के अनुकूल कहानियों की रचना कर अपनी मेधा का परिचय दिया है। हम उनके प्रति कृतज्ञ हैं। प्रारम्भ में लेखन की प्रेरणा उन्हें अपने सुपौत्र श्रेयांस से मिली, तथा उनकी पीढ़ी को ध्यान में रखकर ही कमलाजी ने कहानियों का लेखन प्रारम्भ किया। सुपौत्र का आग्रह था-'माँ! कुछ लिखो ना।' सुपौत्र की यह विनति उनके हृदय को छू गई एवं कमलाजी एक के पश्चात् एक कहानी लिखती गईं। उनकी अधिकतर कहानियाँ जिनवाणी के बालस्तम्भ में प्रकाशित हुई हैं।

यह उल्लेख करते हुए हमें हर्ष का अनुभव होता है कि पुस्तक की लेखिका सहृदया श्रीमती कमला हणवन्तमलजी सुराणा के परिवार ने पुस्तक के प्रकाशन में आंशिक आर्थिक सहयोग प्रदान किया है। शेष अर्थसहयोग हमें श्रावकरत्न श्री राजीवजी-नीताजी डागा, ह्यूस्टन से प्राप्त हुआ है। इन दोनों के प्रति हम हृदय से आभार ज्ञापित करते हैं।

पुस्तक का अन्तिम स्वरूप जिनवाणी सम्पादकीय कार्यालय जयपुर में श्री प्रह्लाद नारायणजी लखेरा के हाथों सम्पन्न हुआ है। हम इनके प्रति भी धन्यवाद ज्ञापित करते हैं।

आशा है यह पुस्तक नई पीढ़ी के लिए उपयोगी सिद्ध होगी।

:: निवेदक ::

चंचलमल बच्छावत	विनयचन्द डागा	डॉ. धर्मचन्द जैन	अशोक कुमार सेठ
अध्यक्ष	कार्याध्यक्ष	कार्याध्यक्ष	मन्त्री

सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल

लेखिका की कलम से

माँ! कुछ लिखो ना' मेरे सुपौत्र श्रेयांस सुराणा ने कहा। उसके बार-बार आग्रह पर कहानी लिखी।

'बचें बारूद-पटाखों से' यह कहानी जिनवाणी पत्रिका में प्रकाशित हुई। पहली कहानी 'पुरस्कृत' हो गई, लिखने की उमङ्ग बढ़ी और अनेक कहानियाँ लिख डालीं। लगभग सभी कहानियाँ किशोरावस्था से नवयुवा अवस्था तक जो संस्कार पनपने चाहिए तथा वे परिपक्वास्था के साथ स्थायी रूप ले लें; इसी उद्देश्य को लेकर लिखी गई हैं। भावना यही रही कि भावी पीढ़ी जीवन में भटके नहीं। कहानियाँ केवल काल्पनिक नहीं हैं। आज के परिप्रेक्ष्य में लिखी गई हैं और अनुभवों की अभिव्यक्ति को यथार्थ धरातल पर उतारती हैं।

मैं कहानी, कविता, लघुकथा, आलेख संस्मरण लिखती हूँ। मेरी रचनाएँ जिनवाणी, जगमग दीप ज्योति अलवर, दिशाकल्प बीकानेर, तनिमा उदयपुर एवं समाचार पत्र 'भास्कर' में प्रकाशित होती रहती हैं। उनकी मैं आभारी हूँ।

जिनवाणी के प्रधान सम्पादक प्रोफेसर (डॉ.) धर्मचन्दजी जैन ने लिखने के लिए प्रोत्साहित किया और उनकी प्रेरणा से लिख रही हूँ। उनका मैं हृदय से आभार व्यक्त करती हूँ।

वरिष्ठ कवयित्री स्वर्गीय प्रोफेसर (डॉ.) सावित्रीजी डागा ने भास्कर समाचार पत्र में 'कन्या भ्रूणहत्या' नामक कविता छपी, उसके उपलक्ष्य में मुझे बधाई दी और मुझे अपनी महिला साहित्यिक संस्था 'सम्भावना' से जोड़ दिया। वे कहानियाँ लिखने के लिए उत्साहित करती रहती थीं। उनकी भी मैं आभारी हूँ।

मैं आभारी हूँ जाने-माने ख्याति प्राप्त वरिष्ठ कवि प्रोफेसर (डॉ.) रामप्रसादजी दाधीच की, जिन्होंने अमूल्य समय देकर कहानियाँ पढ़ी और सुन्दर 'दो शब्द' लिखे।

मैं आभारी हूँ प्रोफेसर (डॉ.) कमलजी मोहनोत की, जिन्होंने पुस्तक के प्रकाशन हेतु उत्साहित किया।

महिला साहित्यिक संस्था 'सम्भावना' जोधपुर की बहिनों की भी आभारी हूँ। उनसे मुझे आगे बढ़ने की प्रेरणा मिलती है।

मैं अपने जाने-अनजाने पाठकों का आभार प्रकट करती हूँ जो मेरी रचनाएँ पढ़कर, कभी लिखित में, कभी मोबाइल द्वारा अपनी प्रतिक्रियाएँ समय-समय पर देकर प्रेरित करते रहते हैं।

मैं आभारी हूँ अपने परिवार के सभी सदस्यों की, वे सृजनात्मक कार्यों को बढ़ावा देते रहते हैं।

मैं कृतज्ञता ज्ञापित करती हूँ सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल, जयपुर के प्रति कि इस संस्था के पदाधिकारियों ने मेरी कहानियों के संकलन को प्रकाशन योग्य समझा एवं सुन्दर रीति से प्रकाशित करवाया।

-कमला हणवन्तमल सुराणा

दो शब्द

श्रीमती कमला सुराणा जो पिछले कई वर्षों से कहानियों के साहित्यिक जीवन में प्रतिष्ठित है, वह मेरे घर कल आई तथा प्रस्तुत कहानियों की पाण्डुलिपि मुझे दे गई। मुझे अच्छा लगा।

इस पाण्डुलिपि की कुछ कहानियाँ एक सरसरी निग़ाह से मैं देख गया। उनके शीर्षक निम्न प्रकार से है–प्रायश्चित्त, बदल गई श्रेया, मातृत्व प्रेम, बाल बहादुर : आर्य एवं अनुज, ऐसे भी होते हैं बच्चे, भारती बेटी प्रियल, बचें बारूद पटाखों से, ईमानदार।

इनके शीर्षक कथा की विषय-वस्तु को व्यक्त करते हैं। पर मैंने जब इन कथाओं को पढ़ा तो उपरितौर पर मुझे लगा कि कथाकार का दृष्टिकोण और अनुभूतियाँ व्यापक हैं। वे जीवन, परिवार, समाज, समय और आधुनिक काल के जीवन का मार्मिक चित्रण करती हैं। इनके पास अच्छी भाषा है जो सीधे हृदय को छूती है। वर्तमान काल के जीवन का जो संघर्ष है और समय की जो उथल-पुथल है उसका भी कथांकन उन्होंने किया है। कहानियों का आख्यान छोटा है, भाषा सहज, सरल और प्रवाहमय है तथा पाठकों को बाँधे रहती है।

जहाँ तक मेरी जानकारी है कमला सुराणा ने हिन्दी साहित्य जगत् में अभी-अभी प्रवेश किया है और थोड़े ही समय में उन्होंने अपनी प्रतिष्ठा स्थापित की है।

मुझे इनकी कहानियाँ जैसा कि इन्होंने बताया कुछ साहित्यिक पत्रिकाओं में छपी भी हैं। वे जोधपुर **'महिला सम्भावना'** की सक्रिय सदस्य हैं और वहाँ कहानी पाठ करती रहती हैं। उनका साहित्यिक जीवन विकास करे और उन्हें ख्याति प्राप्त हो, यही मेरी हार्दिक अभिलाषा है। हिन्दी साहित्य जगत् इनको उचित सम्मान प्रदान करेगा, ऐसा मेरा पूर्ण विश्वास है।

डॉ. रामप्रसाद दाधीच
सेवानिवृत्त प्रोफेसर, हिन्दी-विभाग, जयनारायण व्यास विश्वविद्यालय, जोधपुर
नैवेद्य, 93, नेहरू पार्क, जोधपुर (राजस्थान)

सम्पादक के उद्‌गार

ये कहानियाँ पहले से प्रसिद्ध कथानकों के आधार पर रचित नहीं हैं, लेखिका ने अपने अध्ययन, दीर्घकालिक अनुभव एवं नई पीढ़ी का निरीक्षण कर उन्हें आवश्यक नयन प्रदान करने की दृष्टि से इन कहानियों की रचना की है। हर एक कहानी कल्पना–प्रसूत है, किन्तु जीवन की यथार्थता से सम्पृक्त है। इनमें जीवन–मूल्यों को प्रवीणता से गूँथा गया है, जो पाठक के चित्त को झंकृत कर उसमें सहज प्रविष्ट होते हैं। सामाजिक कुरीतियों, पारिवारिक रिश्तों एवं व्यक्तिगत कमज़ोरियों को उभारने के साथ कमलाजी सुराणा ने मनोवैज्ञानिक एवं तार्किक दृष्टि से राह दिखाई है। इन कहानियों को पढ़कर आनन्दानुभूति भी होती है तो ये दिल को गहराई से कुरेद कर नई ऊर्जा एवं उत्साह का सञ्चार भी करती हैं।

–डॉ. धर्मचन्द जैन

विषयानुक्रमणिका

1.	बचें बारूद पटाखों से	1
2.	प्रायश्चित्त	4
3.	बदल गई श्रेया	7
4.	ऐसे भी होते हैं बच्चे	11
5.	मातृत्व प्रेम	14
6.	भारत की बेटी प्रियल	18
7.	बाल बहादुर	21
8.	होनहार बिरवान के होत चीकने पात	25
9.	माँ का अहं	30
10.	ईमानदार	34
11.	बिना कारण न करें हिंसा	38
12.	जूठन	41
13.	समाज की महत्ता	45
14.	आदर्श प्रधानाध्यापक	49
15.	पत्थर की मनोकामना	54
16.	क्षमा	57
17.	समाज के घुन	62
18.	पड़ोसिन	67

श्रीमती सुधा देवीजी

एवं

स्व. श्रीमान् टीकमचन्दजी हीरावत

की प्रेरणा से

बचें बारूद पटाखों से

देखो बारूद की औकात
हावी हो, करे बरबाद
तारे चमकते, धमाके लुभाते
रंग-रंगीली रोशनी करते।
हमें मुग्ध-आकर्षित करते
दुनिया पर रंग चढ़ाते।
इसकी चिनगारियाँ आग जलाती
फेक्ट्रियाँ, दुकानें धूँ-धूँ करती
बच्चों के हाथ-पाँव जलाती
मासूमों की जान ले लेती।
डरो-डरो! बचो-बचो!! इससे
कोसों दूर रहो इससे।

राहुल ने अभिनव से कहा–"मित्र, दीपावली की छुट्टियाँ आ रही हैं, खूब मस्ती करेंगे।"

अभिनव ने कहा–"पहले गृह-कार्य कर लेते हैं, बाद में क्रिकेट खेलेंगे।

राहुल ने कहा–"दोस्त! मुझे ढेर सारा गृह-कार्य दिया है, कार्य पूरा ही नहीं होगा और छुट्टियाँ ऐसे ही बीत जायेंगी। इन छुट्टियों में पापाजी मुझे दीपावली के दिन पहनने के लिए नई ड्रेस दिलायेंगे और 5,000/- रुपयों के बम-पटाखे दिलायेंगे। मैं खूब आतिशबाजी करुँगा।

अभिनव आँखें फाड़े रह गया और कहने लगा, पाँच हजार का बारूद छोड़ेगा? भाई मैं तो एक पैसे का बारूद नहीं खरीदूँगा। बारूद छोड़ने से अनेक जीवों की हिंसा होती है। मैं ऐसा काम नहीं करुँगा।

राहुल–जीवों की हत्या हो तो हो। वर्ष भर में दीपावली ही तो एक ऐसा त्यौहार है जिस पर बम-पटाखे छोड़े जाते हैं। मेरे से ऐसा कदापि न होगा कि मैं बम-पटाखे न छोड़ूँ। मैं तो चाहता हूँ कि तू भी मेरे घर आ जाना, साथ-साथ आनन्द लेंगे।

अभिनव–सुन! मैं तुझे एक सच्ची घटना सुनाता हूँ। मैं भी दीपावली पर खूब पटाखे छोड़ा करता था। कुछ वर्षों पहले की बात है। मेरे घर पर एक कुत्ता आया करता था। मेरी माताजी दूध में रोटी चूरकर उसे खिलाया करती थी। वह कुत्ता हमारे घर के इर्द-गिर्द घूमा करता था, ऐसा लगता था कि वह घर की रखवाली करता है। दीपावली के दिन मैंने बम-पटाखे छोड़े, तो कुत्ता इतना डरा कि दुःखी होकर एक कोने में दुबक कर जा बैठा। दो दिन तक वह टस से मस नहीं हुआ। माँ उसका भोजन बनाकर लाई और खिलाने के लिए प्रयत्न किए गए। उसे पुचकारा-सहलाया, गरजें की, पर वह तो सहमा हुआ बैठा रहा। मैं उसे बहुत अधिक प्यार करता था। वह हृष्ट-पुष्ट और सुडौल था। मैं उसे शेरू कहकर बुलाता था। मैंने भी उसे बहुत मनाया फिर भी वह भूखा-प्यास चुप बैठा था। मैंने उसकी आँखों के भाव एवं भाषा पढ़ी, जिससे ऐसा प्रतीत हुआ कि वह घबराया हुआ और अत्यधिक डरा हुआ है। मानो कह रहा हो तुम बम-पटाखे मत छोड़ो। वह आहार-निहार के बिना निढ़ाल हो रहा था। उसे इस दशा में देख मेरा दिल दया से भर आया। मुझे अपने पर बहुत ग्लानि हुई। मेरे कारण इसकी यह दशा हुई। उसी समय मैंने संकल्प किया कि मैं कभी आतिशबाजी नहीं करूँगा।

कुछ समय पश्चात् एक घटना और घटी। हमारे पड़ौसी भैया की शादी थी। मैं उनकी बारात में गया। रास्ते में सड़क पर नाच हुए, ढ़ोल-ढ़माके बजे और बम-पटाखे की वर्षा होने लगी। तरह-तरह के चमचमाते बारूद छोड़े गए। वहीं पर एक घना छायादार पेड़ था। उस पर अनेक पक्षी बैठे थे। पक्षी बम के धमाके और अधिक चमक सहन न कर सके। बेचारे पक्षी अपना बसेरा छोड़ फड़फड़ाने लगे। उनकी आँखें चौंधिया गईं। धमाके के भय से वे बेहाल हो गए। एक के बाद एक बम छूट रहे थे। बाराती आतिशबाजी में मग्न थे, लेकिन मेरी आँखें और मन उनकी गतिविधियों पर

टिके हुए थे। इतने अधिक शोर-शराबे में भी उनकी चीं-चीं और फड़फड़ाने की आवाज जोरों से आ रही थी। वे सब हतप्रभ हो गए। वे कहाँ जाएँ और कहाँ बैठें? उन पक्षियों को देखकर मुझे बड़ा तरस आया। मेरे मन में विचार आया हम शौक-मस्ती में भोले-मूक प्राणियों को कितना कष्ट पहुँचा देते हैं। अरे! इस धरा पर तो सभी प्राणियों का समान अधिकार है, केवल अन्तर इतना ही है कि हम बुद्धिजीवी हैं और वे मूक।

अभिनव ने अपने अनुभव की घटनाएँ सुनाईं, किन्तु राहुल पर तो जूँ तक न रेंगी।

दीपावली की रात को राहुल के दादाजी बरामदे में सामायिक कर रहे थे। राहुल बारूद से भरा कार्टून सड़क पर ले गया। अपने मित्रों के साथ बम-पटाखे छोड़ने शुरू किए। उसने सूतली बम छोड़ा। उसका धमाका इतना जोर से हुआ कि दादाजी के कान का पर्दा फट गया। उन्हें बेचैनी हो रही थी और उन्हें कुछ भी सुनाई नहीं पड़ रहा था। सभी घर वालों को चिन्ता हो गई। सवेरे राहुल और उसके पिताजी दादाजी को लेकर अस्पताल गए। डॉक्टर की जाँच के पश्चात् ज्ञात हुआ कि दादाजी के कान का पर्दा फट गया है। राहुल को बड़ा दुःख हुआ, उसने सोच-विचार कर डॉक्टर से कहा- डॉक्टर साहब! सुनने वाली मशीन लगा दीजिए। डॉक्टर से वापस उत्तर मिला कि मशीन भी नहीं लग सकती।

राहुल अपने दादाजी को अत्यधिक प्यार करता था। वह उनके साथ ही खाता-पीता था, सोता और खेलता भी उनके साथ था। कहानी-किस्से भी सुना करता था। उसकी स्थिति बहुत दयनीय हो गई। खूब फूटफूट कर रोया, पश्चात्ताप करने लगा। अब क्या होगा जब चिड़िया चुग गई खेत। यदि मैं अभिनव की बात मान लेता तो मेरे दादाजी के कान क्षति-ग्रस्त नहीं होते। उन्हें मैंने बहरा कर डाला।

बच्चों! बम-पटाखे छोड़ने से वायुकाय के जीवों की हिंसा होती है। अनेक पशु-पक्षी दुःखी होते हैं। वायु प्रदूषण बढ़ता है। पर्यावरण दूषित होने से कई हानियाँ होती हैं। पैसे व्यर्थ में जाते हैं। सब प्रकार से बर्बादी! बर्बादी!!

प्रायश्चित्त

एक गाँव में तीन भाइयों का परिवार साथ में रहता था। उनकी माताजी भी उनके साथ रहती थीं। सबसे छोटे भाई का देहान्त कुछ दिन पहले हो गया था। उसकी पत्नी रत्ना थी और पुत्र का नाम अमित, पुत्री का नाम सुहानी था। दोनों स्कूल में पढ़ते थे।

छोटे भाई के देहान्त के एक महीने पश्चात् रत्ना के दोनों ज्येष्ठ और जेठानियाँ मिलकर कहने लगे–"रत्ना! तुम तीनों का खर्च हम लोग वहन नहीं कर सकते हैं। अत: तुम अलग हो जाओ।" रत्ना पर दु:ख का पहाड़ टूट पड़ा। पति के निधन का दु:ख झेल ही नहीं पा रही थी कि सामने एक विकट स्थिति आ खड़ी हुई। रत्ना की सास बेटों के मुँह से ऐसी ओछी बात सुनकर अचेत हो गई। चेतना आने पर **सास ने कहा**–"रत्ना बहू! मैं तेरे साथ चलूँगी।"

रत्ना ने कहा–"माँजी, आप अपने बेटों के साथ रहें। आपको घर से जाने का नहीं कहा है।"

सास–"बेटी, मैं इन नीचों के साथ नहीं रह सकती। जब मेरा छोटा बेटा सबसे अच्छा कमाता था, तब हाजरी में थे। उसके जाते ही मुँह मोड़ लिया। मैं युवा विधवा को अकेली कैसे छोड़ूँ?"

रत्ना ने मुँह से एक शब्द भी न निकाला, न आँसू बहाए, न उनके सामने गिड़गिड़ाई। मन में कहा, सब बनी, बनी के होते हैं, कष्ट में कौन सहाय। यह तो दुनिया का नियम है। चारों घर से खाली हाथ निकल गए।

रत्ना पढ़ी-लिखी न थी, लेकिन विनीत, धैर्यवती, स्वाभिमानिनी और व्यावहारिक थी। वह अपने पति की असाध्य बीमारी के इलाज में लगभग सारे जेवर बेच चुकी थी। एक कण्ठी और कर्णाभूषण बाजार में बेचकर एक छोटा सा घर किराये

लिया। गृहस्थी चलाने के लिए आवश्यक सामग्री खरीद लाई। उधारी भी बहुत करनी पड़ी। वह चार घरों में झाड़ू-पोचे लगाने का काम करने लगी। घर आते समय दर्जी की दुकानों से साड़ियों के फॉल लगाने और ब्लाउजों की तुरपाई का काम ले आती थी, फिर भी कमाई इतनी कम थी, जैसे गरम तवे पर पानी के छींटे डाले तो क्या बचे?

अमित माँ-दादी को अत्यधिक प्यारा लगता था, आँख का तारा था। पढ़ने में बहुत अच्छा था, लेकिन खाने-पीने में, उतना ही नखराला था। कभी भी खाने में चूक निकाले बिना थाली नहीं उठती थी। माँ साग अच्छा नहीं बना है। साग में मिर्ची अधिक डाल दी। रोटी कच्ची रह गई। साग में हींग की सुगन्ध नहीं आई। बघार का जीरा जल गया आदि-आदि कमियाँ बताई जाती थीं। उसके सारे नखरे सहन किए जाते थे। दोनों महिलाओं के द्वारा रात-दिन काम करने के पश्चात् भी घर-खर्च नहीं चलता था, फिर भी रत्ना किसी के सामने रोना नहीं रोती थी। मकान के किराए की मार तो बहुत भारी पड़ती थी। इतने कठिन समय में भी वे दोनों सन्तों के दर्शन तथा नित्य की धर्म-साधना नहीं छोड़ती थीं।

गर्मी के दिन थे। अमित भूखा-प्यासा स्कूल से आया। खाना परोसा गया। थाली में एक गरम सब्जी काँच के प्याले में रायता और रोटी थी। अमित ने एक ग्रास लिया तो सब्जी में नमक न था। तिलमिला कर आव देखा न ताव थाली अपनी माँ के सामने फेंक दी और खाने के बारे में नोंकझोंक करने लगा। थाली फैंकी, काँच का प्याला टूट गया। सब्जी का एक छींटा उछल कर दादी की आँख में चला गया और गुस्से में रसोई के अन्य बर्तन भी धमाधम पटकने लगा। इतने में सन्त महाराज गोचरी में पधारे तो काँच का टुकड़ा उनके पैर में चुभ गया। खून टपकने लगा। प्रतिकूल वातावरण देख सन्त बिना गोचरी लिए मुड़ गए। थोड़ा-सा आगे निकलने पर दादी की नज़र उन पर पड़ी। दादी सन्त के पीछे गई, लेकिन वे दूर निकल चुके थे। रास्ते में खून बिखरा हुआ था। दादी ने बहू को कहा, आज मैंने किस मनहूस का मुख देखा, सन्त गोचरी लिए बिना चले गए और बबुआ भूखा रह गया। यह बात अमित ने सुन ली। यह भी सुना कि सन्त के पैर में काँच अवश्य चुभा है।

अमित का गुस्सा काफूर होने लगा। उसकी भी सन्त के प्रति असीम श्रद्धा थी। अब वह मन ही मन में पछताने लगा। उसका अन्त:करण उसे कचोटने लगा। सकुचाने

लगा। मैंने अपने स्वाद के कारण कैसा अनर्थ कर डाला। अब पछताने से क्या होगा, जब चिड़िया चुग गई खेत। अपने अन्दर ही अन्दर लजाने लगा। डुसक-डुसक कर रोने लगा। दादी ने समझाया-बेटा कभी-कभी बच्चे नादानी कर बैठते हैं। दुपहरी में महाराज के दर्शन करने चलेंगे और क्षमायाचना कर लेंगे। प्रायश्चित्त लेकर जी हल्का करेंगे। उसके हृदय में पछतावे की अग्नि जल रही थी कि मैं कौनसा मुँह लेकर सन्तों के सामने जाऊँ। मैं सामने जाने के लायक नहीं हूँ। अन्तस् की पीड़ा उचाटें मारने लगी। अन्त में सोचा कि क्षमा याचना माँगने से ज्यादा कोई बात श्रेयस्कर नहीं हो सकती। उसमें शुद्ध भावों का सञ्चार होने लगा। घर के चारों सदस्य स्थानक गए। सन्तों को वन्दना की। सन्तप्रवर ने बैठने का संकेत किया।

अमित ने कहा-"मेरे कारण आपके पैर में काँच चुभा है, आपके पैर में गहरा घाव हुआ है, मुझे क्षमा कर दीजिए।" **सन्तप्रवर ने कहा**-"कोई विशेष घाव नहीं हुआ है, चिन्ता न करो। तुम संस्कारित हो, तुम्हारे आन्तरिक भाव कितने सुन्दर हैं।" सन्त ने बच्चे को दूसरी ओर ले जाकर कहा-"अमित! सन्ध्या के समय खाने में तुम अपनी माँ-दादी की थाली देखना, तुम स्वयं समझ जाओगे।" अमित ने माँ-दादी को भोजन करते देखा, केवल दो-दो रोटी, लाल मिर्ची और नमक की चटनी, जिसमें जीरा भी न था। अमित माँ-दादी की गोद में मुँह डालकर फूट-फूट कर रोया। उसे अपनी आदत को सुधारने का पाठ मिल गया एवं अब जैसा भोजन मिलता, वैसा करने लगा।

बदल गई श्रेया

लक्ष्मणगढ़ अभियन्ता कॉलेज के हॉस्टल में बहुत सी लड़कियाँ रहती थीं। उसमें एक लड़की अति सुन्दर और समृद्ध परिवार की थी। वह सभी लड़कियों से अलग रहती थी। किसी से भी सीधे मुँह बात नहीं करती थी। वह किसी से मेलजोल नहीं रखती थी। सभी लड़कियाँ तीन-तीन पलङ्ग वाले कमरे में रहती थी। श्रेया एक पलङ्ग वाले कमरे में अकेली रहती थी। श्रेया घमण्डी स्वभाव की लड़की थी।

श्रेया के घर से फल, मेवा और मिठाइयाँ आती रहती थीं। खाने के बाद जो बच जाती उसे ताजी की ताजी फेंक देती थी। अपनी सहपाठिनियों में नहीं बाँटती थी। कोई लड़की सामने मिल जाती तो उससे आँख चुराकर निकल जाती थी।

कॉलेज में सभी लड़कियों को प्रोजेक्ट तैयार करने के लिए कहा गया। लड़कियाँ वार्डन से पूछकर प्रोजेक्ट का सामान खरीदने गई। श्रेया भी अकेली ही सामान खरीदने गई। तीसरे दिन प्रोजेक्ट जमा करवाना था। जमा कराने की पहली रात को प्रोजेक्ट पूरा करके लगभग सभी लड़कियाँ सो गई। उनके साथ 'मिली' नाम की लड़की थी। वह रंग-रूप में साधारण ही थी। निर्धन परिवार की होने के कारण कपड़े भी ठीक-ठीक ही पहनती थी। लेकिन कुशाग्र बुद्धि वाली थी और कलाकार थी। प्रोजेक्ट बनाते-बनाते थक गई। प्रोजेक्ट के नीचे नाम अंकित नहीं किया और सो गई। श्रेया ने प्रोजेक्ट नहीं बनाया। उसको अकेली को बनाना समझ में नहीं आया। अब वह असमंजस में पड़ गई। हाथ मलती रही। पलङ्ग से उठी और पास वाले कमरे में गई। तीनों लड़कियाँ सो रही थी। दो लड़कियों के प्रोजेक्ट में उनमे नाम लिखे हुए थे, मिली के प्रोजेक्ट में नाम नहीं लिखा था। प्रोजेक्ट अति सुन्दर बना हुआ है, नाम भी लिखा हुआ नहीं है, ऐसा सोचकर श्रेया ने धीरे से प्रोजेक्ट उठाया और अपने कमरे में जाकर अपना नाम लिख दिया। मन ही मन बहुत

खुश हुई कि प्रोजेक्ट समय पर जमा हो जाएगा। सवेरे सभी लड़कियाँ उठीं, प्रोजेक्ट जमा करवाने की तैयारी में लग गई। मिली उठी, उसकी टेबल पर प्रोजेक्ट नहीं था। सब लड़कियों से पूछा गया कि मेरा प्रोजेक्ट किसी ने देखने के लिया है तो मुझे लौटा दो। प्रोजेक्ट नहीं मिला। मिली डरती-डरती श्रेया के कमरे में पहुँची उसने कहा-श्रेया तुमने मेरा प्रोजेक्ट देखने के लिया है तो लौटा दो। श्रेया उस पर ऐसी बरसी कि-'तुमने मुझें क्या समझा? क्या मैं चोर हूँ, तूने मेरे कमरे में आने का साहस कैसे किया? निकल जा यहाँ से, नहीं तो धक्के मार निकाल दूँगी।' जाते समय मिली की दृष्टि प्रोजेक्ट पर पड़ गई और मिली ने कहा-'यह प्रोजेक्ट मेरा है, मैंने इसको बनाने में बहुत परिश्रम किया है।' श्रेया ने कहा-'नीच कहीं कि भागजा यहाँ से।' बेचारी मिली मुँह लटकाए, दुःखी होकर अपने कमरे में आकर रोने लगी कि मैंने अपनी औकात से ज्यादा खर्च किया है मेरा अथक परिश्रम व्यर्थ गया। आज ही तो जमा करवाना है, पुनः बनाने के लिए न तो सामान है, न ही समय बचा है।

प्रोजेक्ट जमा होने लगे। सूची में देखा तो मिली का प्रोजेक्ट नहीं आया है। निरीक्षक ने मिली को बुलाया और कहा-'तुम्हारा प्रोजेक्ट नहीं आया।' मिली ने कहा-'मैंने प्रोजेक्ट बनाया था लेकिन मेरे कमरे से गायब हो गया।' निरीक्षक ने कहा- 'तुम झूठ बोलती हो।' मिली फूट-फूटकर रोने लगी। सभी लड़कियों ने मिलकर कहा-'इसने रातों-रात बनाया था।' लेकिन निरीक्षक ने उन पर विश्वास नहीं किया। प्रोजेक्ट का परिणाम घोषित हुआ, उसमें श्रेया प्रथम रही। अब तो श्रेया फूली न समाई।

गर्मी के दिन थे। अति गर्मी के कारण सभी परेशान थे। काले-काले बादल आए। मूसलाधार वर्षा होने लगी। हॉस्टल की लड़कियाँ नहाने के लिए परिसर में आ गईं। श्रेया भी यह आनन्द उठाने के लिए आ गई। परिसर के एक ओर गन्दा नाला था उसकी बाउण्डरी वॉल टूटी हुई थी। परिसर में पानी भर जाने के कारण श्रेया को नाला नहीं दिखाई दिया। कूदती-फाँदती नाले में जा गिरी। लड़कियाँ मस्ती में नाच रही थी। मिली की नज़र अचानक नाले की ओर गई, देखा-श्रेया नाले में बह रही है। वह वहाँ से भागी और अपनी चुन्नी श्रेया के पास डाली, कहा-इसे पकड़ ले और स्वयं भी कूद पड़ी। मिली तैरना जानती थी। नाले के पास में पीपल का पेड़ था, उसके पास पहुँचकर एक मोटी डाली पकड़ ली। एक हाथ से डाली पकड़ी और दूसरे हाथ से श्रेया को कस कर पकड़ लिया। सोचने लगी बाहर कैसे निकले, इतने में सभी लड़कियाँ वहाँ पहुँच गई। भयानक स्थिति

को देखा। तुरन्त कॉलेज कार्यालय में सूचना दी गई। झट से कर्मचारी आए, तब तक मिली पानी के थपेड़े झेलती रही थी। दोनों को निकाला गया। श्रेया के कानों और आँखों में गन्दा पानी चला गया, उसको अत्यन्त पीड़ा हो रही थी। उसे कमरे में पहुँचाया गया। मिली ने उसे नहलाया-धुलाया और सुलाया। डॉक्टर को बुलवाया गया। परीक्षण किया गया। श्रेया के स्वास्थ्य में कोई विशेष हानि नहीं पहुँची, पर उसे गहरा सदमा पहुँचा। सभी लड़कियाँ अपने-अपने कमरे में जाते समय मिली की बहादुरी की प्रशंसा करने लगीं। मिली श्रेया की सेवा में लग गई। मिली ने श्रेया को गर्म-गर्म चाय पिलाई। श्रेया के घर वालों को सूचना दी गई। मिली पानी के थपेड़े और श्रेया को कसकर पकड़ने से बहुत थक गई थी। पेट में भूख के मारे चूहे दौड़ रहे थे। मिली ने श्रेया के हाथ-पैर दबाए और चिकित्सा भी बराबर दे रही थी। उसका मन बहलाने के लिए कहानी, किस्से कहे, गाने भी सुनाए। श्रेया में बोलने की शक्ति न थी फिर भी उसने कहा-"तुम कितनी अच्छी हो।" कॉलेज के सभी लोग श्रेया को देखने आए।

तीन घण्टे पश्चात् श्रेया के माता-पिता आए और देखा, उसकी सहपाठिन उसको सहला रही है। मिली ने श्रेया के माता-पिता के चरण-स्पर्श किए। दवाइयों से अवगत कराया। श्रेया को उसके माता-पिता अपने घर ले जाने के लिए रवाना हुए तब तक मिली उनकी सहायता करती रही। उसके जाने के बाद स्वयं अपने कमरे में गई।

श्रेया का स्वास्थ्य सुधरा, तब उसने अपनी सारी बात माता-पिता को बतलाई। उसने बताया कि मिली नहीं होती तो मैं आज इस संसार में नहीं होती।

श्रेया के पिता ने कहा-"मैं लक्ष्मणगढ़ कॉलेज के सभी छात्र-छात्राओं, प्राध्यापकों और कर्मचारियों को भोजन के लिए आमन्त्रित करूँगा।"

श्रेया स्वस्थ होकर वापस कॉलेज आ गई। श्रेया द्वारा कार्यालय में सूचना दी गई कि आज का खाना मेरे परिवार की ओर से होगा। जिसमें कॉलेज के समस्त सदस्य आमंत्रित हैं, उनसे अनुरोध है कि समय पर उपस्थित हों।

सन्ध्या के भोजन में सभी लोग ठीक समय पर इकट्ठे हो गए। श्रेया ने मञ्च पर जाकर उद्‌बोधित किया-"आदरणीय आचार्यजी, प्राध्यापकजी, कर्मचारीगण एवं प्रिय विद्यार्थीगण को नमस्कार। इसके साथ ही मिली को मञ्च पर बुलाया गया। मिली सकपका गई कि मुझे ही मञ्च पर क्यों बुलाया गया है? मिली सहमी-सहमी मञ्च पर

गई। तब श्रेया ने कहा–'आज मैं आपके सामने जीवित खड़ी हूँ, बोल रही हूँ। यह नया जीवन मुझे मिली ने दिया है। 'मिली' मिली यानी भगवान मिले। प्रभु ने ऐसी पवित्र आत्मा से मिलाया जिससे मैं मानवता का साक्षात्कार कर रही हूँ। इसके पुनीत विचारों ने मेरे हृदय को परिवर्तित कर दिया। अहं का जो पर्दा मेरी आँखों पर छाया हुआ था वह हमेशा के लिए हट गया।'' प्रोजेक्ट प्रतियोगिता में मैंने प्रथम पुरस्कार प्राप्त किया वह इसका ही था। मैंने प्रोजेक्ट चुराकर घिनौना व्यवहार किया। मुझे हार्दिक पीड़ा हो रही है, जिसका वर्णन करना कठिन है। नाज इस बात का है कि मेरी जैसी तुच्छ एवं संकीर्ण विचार वाली लड़की को इसने अपने जीवन को खतरे में डाल कर मुझे जीवनदान दिया। धन्यवाद है इसके माता-पिता को, जिन्होंने ऐसी सुसंस्कारित सुपुत्री को जन्म दिया। यह मनुज नहीं मनुज अवतारी है। श्रेया के द्वारा मिली को गले लगाते ही करतल ध्वनि से भवन गूँज उठा।

ऐसे भी होते हैं बच्चे

दीपावली के दिन समीप थे। पड़ोस के बच्चे पटाखे छोड़ने लगे। सानुज को पटाखे छोड़ने का शौक आया। उसने पिताजी से कहा–'मुझे पटाखे दिलाओ।'

पिताजी ने कहा–''पटाखे छोड़ने पर सरकार ने रोक लगा दी है और जुर्माना वसूल करते हैं। मैं राज्य के विरुद्ध काम नहीं करूँगा।''

सानुज को यह बातें समझ में नहीं आई। उसे तो पटाखे की चमक-दमक, उसके रंग-रंगीले तारे आकर्षित कर रहे थे। वह अपने मन को वश में न कर सका। उसने माँ के पर्स से पैसे निकाल, उनसे पटाखे खरीद कर स्कूल बैग में भर लिए। उसकी माँ मीना दीपावली के कार्य में व्यस्त थी। उसे पर्स की आवश्यकता नहीं पड़ी। दीपावली-अवकाश चल रहे थे, इसलिए सानुज का स्कूल बैग भी नहीं सम्भाला।

सानुज के मन में लड्डू फूट रहे थे कि कब दीपावली की साँझ आए और वह पटाखे छोड़े। लम्बी प्रतीक्षा के बाद दीपावली की साँझ आ गई। उसके माता-पिता सन्ध्या की पूजा-अर्चना कर रहे थे, तब सानुज अपने कमरे का टी.वी. चालू छोड़, माता-पिता की आँखों में धूल झोंक कर नौ-दो ग्यारह हो गया। दो-तीन दोस्तों को साथ लेकर अपने फ्लेट के पिछवाड़े में पहुँच गए, जहाँ पर श्रमिक लोगों के निवास थे। वहाँ उन्हें कोई मना करने वाला नहीं था। बैग में से पटाखे निकालकर छोड़ने शुरू किए। श्रमिकों के बच्चे भी वहाँ आ गए। सभी पटाखे छोड़ने का आनन्द ले रहे थे। एक जलता बम जाकर उनके छप्पर से बने निवास-स्थान पर गिर गया। किसी को पता न चला, धीरे-धीरे जलते-जलते आग ने उग्र रूप धारण कर लिया। धू-धू करके आग जलने लगी। उसमें रहने वाले लोग बाहर निकल आए। अग्नि शमन से दमकल गाड़ी आई। आग तो जल्दी बुझ गई लेकिन विपन्नों का सारा सामान जल गया। कॉलोनी में त्राहि-त्राहि मच गई। कुछ लोग बच्चों को कोसने लगे और भला-बुरा

कहने लगे। सानुज हक्का-बक्का रह गया। उसकी समझ में कुछ नहीं आ रहा था। दूसरे मित्र वहाँ से भाग निकले। सानुज अकेला रह गया। वह सोचने लगा 'मैं क्या करूँ, चोरी करके, चोरी-चोरी घर से आया था।' वह डर रहा था। स्वयं के प्रति ग्लानि होने लगी। घबरा रहा था, संकुचित हो रहा था। मैंने अपनी खुशी के लिए कैसा अनर्थ कर डाला। घुटनों में मुँह डाल कर जोर-जोर से रोने लगा। इतना रोने लगा कि उसे सम्भालना भारी पड़ गया। लोगों को पता लग गया। यह तो प्रतिष्ठित संजयजी का लड़का है। दो व्यक्ति घटना सुनाने उनके घर पहुँच गए। घटना सुनाई गई तो उन्होंने कहा मेरा बेटा अपने कमरे में टी.वी. देख रहा है। उसके कमरे में जाकर देखा तो सानुज नदारद था। उसके मम्मी-पापा घटना स्थल पर पहुँचे तो देखा कि सानुज घुटनों में मुँह डालकर फूट-फूट कर रो रहा है।

मम्मी-पापा ने कहा- ''बेटा हम तुम्हें कुछ नहीं कहेंगे। हम तुम्हें नहीं डाटेंगे। तुम मुँह ऊँचा करो और घर चलो।'' उसने मुँह ऊपर करके पैरों में पड़कर, हाथ जोड़कर क्षमा माँगी तथा अपने अपराध पर क्षोभ प्रकट किया। उसे एक तो रुपये चुराने का दुःख था, दूसरा बिना कहे पटाखे लाने एवं छोड़ने का दुःख था। तीसरा दुःख आग लगने से मकान जलने का था। वह ग्लानि से भर गया। उसके मन में गरीबों के प्रति संवेदना जगी एवं पिताजी से कहा-'पिताजी! मैं घर तब तक नहीं चलूँगा जब तक पीड़ित श्रमिकों का खाने-पीने, रहने और सोने का प्रबन्ध न हो जाय।'

पिता ने सहानुभूतिपूर्वक कहा-मैं इनके लिए तम्बू लगवाकर, खाने-पीने, रहने की सभी व्यवस्था कर दूँगा। तुम चिन्ता मत करो।

सानुज यह सुनकर सन्तुष्ट हुआ एवं माता-पिता के साथ घर चला गया। तम्बू लगने के बाद उन बच्चों को सम्भालने जाने लगा। तम्बू में रहने वाले उन श्रमिकों के बच्चों के साथ सानुज का कुछ अनोखा सा रिश्ता जुड़ गया। वह अब प्रतिदिन वहाँ जाता तथा उन बच्चों को पढ़ने में मदद करता। दिन प्रतिदिन यह क्रम चलता रहा। वह पढ़ाने के साथ उन्हें कुछ नीतिगत कहानियाँ, किस्से भी सुनाता, जो उसकी दादी उसे सुनाती थी। इससे बच्चों में संस्कार के पुष्प खिलने लगे। इसकी सुवास उनके परिवारों तक पहुँचने लगी। वे गरीब बच्चे विचारों से अमीर होने लगे। अपने सुविचारों से उन्होंने पिता को प्रभावित कर शराब पीना, जुआ खेलना आदि छुड़वा दिया। सानुज ने

यह बात अपने पिता को कही तो वे बहुत अभिभूत हुए। उसके पिताजी भी उन गरीब परिवारों की उन्नति में रुचि लेने लगे। चूँकि वे एक बड़े बिल्डर थे, तो उन्होंने उन श्रमिकों को ठेकेदार के रूप में नियुक्त कर दिया। अब उन श्रमिकों की आय बढ़ने लगी, तो उन्होंने निर्माणाधीन बिल्डिंग में ही अपना फ्लेट बुक कर लिया और किश्तों में भुगतान की विधि अपना ली।

बच्चों! पटाखे की चमक देख,
उसमें रञ्जित न होना,
शौक-शौक में हिंसक न बनना,
दूसरों के जीवन में अन्धियारा न करना।

मातृत्व प्रेम

कोलकाता शहर में एक धनी परिवार रहता था। परिवार में पति-पत्नी और सुमी बेटा था। सुमी की देख-भाल सोनलबाई किया करती थी। वह केवल स्तन-पान कराने के लिए प्रिया के पास ले जाया करती थी। वह चार मास का हुआ तब स्तन-पान भी छुड़ा दिया। यह बात उसके पति नमन को अच्छी नहीं लगी।

नमन ने कहा–"प्रिया! तुम अपने बच्चे के साथ अन्याय कर रही हो। माँ का दूध शक्तिवर्धक एवं रोग-प्रतिरोधक होता है। इसने तो तेरी गोद का आनन्द भी नहीं लिया है।"

प्रिया ने कहा–"देखो जी! स्तन-पान कराने से मेरी आकृति विकृत हो जाएगी।"

प्रिया बच्चे को अपने पास सुलाना पसन्द नहीं करती थी। नींद में व्यवधान हो जाता है। सुमी के पिता कम्पनी से आते तब उसे अपने पास सुलाते थे। बच्चे को भूख लगती और वह रोने लगता तब प्रिया कहती-इसे सोनल के पास पहुँचा दो। वह दूध पिला कर सुला देगी। नमन कहता, मैं पिला दूँगा। प्रिया कहती, सोनल को किसलिए रखा है। आप सो जाओ। थके हुए हो, सो जाइए। नमन का कारोबार अत्यधिक फैला हुआ था। चाहते हुए भी वह अपने बेटे को समय नहीं दे पा रहा था।

प्रिया देर से उठती थी। नाश्ते के लिए डाइनिंग टेबल पर आती थी, नाश्ता लगा हुआ मिलता। सोनल उनके खाने-पीने की देख-भाल में लगी रहती थी, तब वह सुडौल-सुन्दर बच्चा सोनल के आगे-पीछे घूमता था। कुछ समय के लिए सुमी अपने पिता की गोद में बैठता तब उसे अपार आनन्दानुभूति होती थी। उसे गोद में रहना

अच्छा लगता था। पिता भी उसे दूर करना नहीं चाहता था। लेकिन व्यस्तता के कारण मजबूर था।

सोनल ने सुमी को सुप्रभात बोलना सिखाया। सुमी मधुर ध्वनि में तुतलाता अपने माता-पिता को सुप्रभात बोलता था, लेकिन प्रिया ने अपने बच्चे को अच्छी तरह से निहारा तक नहीं। बच्चे की किलकारी देखने के लिए उसके पास समय नहीं था। वह नाश्ता करके ब्यूटी-पॉर्लर पर तैयार होने के लिए निकलती। वहाँ से ताश खेलने क्लब चली जाती थी। दस किटी पार्टियों की सदस्या थी। घर में अलग-अलग काम के लिए विश्वसनीय नौकर रखे हुए थे, जिससे घर का काम ठीक-ठाक चल जाता था। सुमी को नहलाना-धुलाना, दूध पिलाना यानी पूरी देख-भाल सोनल हीं किया करती थी।

सुमी तीन वर्ष का हो गया तब नमन ने उसे बहुत अच्छी स्कूल में प्रवेश दिलवा दिया। 'अभिभावक मिलन दिवस' (Parents Meeting) में भी नमन अकेला ही जाता था।

प्रिया की ननद सुरभि जयपुर में रहती थी। विशेष कारणवश प्रिया को जयपुर जाना पड़ा। नमन को भी साथ जाना था, लेकिन कम्पनी के काम के लिए अचानक अमेरिका जाना पड़ा।

सुरभि प्रिया को लेने एयरपोर्ट पहुँची तो अपनी भाभी से पूछा- 'सुमी कहाँ है?'

प्रिया ने कहा- 'तुम्हारे भाई, अचानक कम्पनी के काम के लिए अमेरिका चले गए हैं, मेरे से वह सम्भलता नहीं हैं। इसलिए मैं उसे नहीं लाई हूँ।'

अरे भाभी! मैं उसे सम्भाल लेती, तीनों बच्चे साथ में खेलते।

प्रिया निपट कर जल-पान करने टेबल पर आई तब सुरभि, शौर्य और उनके दोनों बच्चे अवनी-आर्य भी पास बैठ गए। कुछ स्वयं की और कुछ इधर-उधर की बातें करने लगे। सुरभि-शौर्य स्वयं भी खाने का मजा ले रहे थे साथ में बच्चों को भी खिला रहे थे। प्रिया यह देखकर हैरान हो रही थी। कुछ समय पश्चात् सुरभि रसोईघर में गई और बच्चों के टिफिन तैयार कर पानी की बोतलों के साथ उनके स्कूल बैग में रख दिए। दोनों पति-पत्नी ने बच्चों के बैग उठाए और उन्हें स्कूल बस में बिठाने गए। वापस आकर तीनों गपशप मारने लगे। ननद और भाभी की अच्छी बनती थी।

सुरभि ने प्रिया को अखबार लाकर दिया और उससे कहा कि आप इसे पढ़िये तब तक मैं खाना बना लूँ, फिर कहीं घूमने चलेंगे। सुरभि-शौर्य रसोई में गए, शौर्य ने सब्जियाँ सुधार दी और सुरभि ने खाना बना लिया। सुरभि महारानी कॉलेज में प्राध्यापिका थी। भाभी के आने के कारण उसने कॉलेज से तीन दिन का अवकाश ले लिया था।

प्रिया ने सुरभि से कहा– 'तुम पूरे दिन मशीन की तरह काम करती रहती हो। कॉलेज जाती हो, घर का काम, बच्चों को सम्भालना। तुम बच्चों की परवरिश के लिए बाई रख लो और कुछ अधिक पैसे देकर खाना बनवा लिया करो। तुम दोनों की 'आय' अच्छी है, फिर क्यों माथापच्ची करती हो।'

सुरभि ने कहा– 'भाभी! बच्चों का काम करना मुझे अच्छा लगता है। खाना बनाने में शौर्य मेरी सहायता करते हैं। हम मनपसन्द का खाना बनाते हैं और गरमागरम खा लेते हैं। झाड़ू पोंछा एवं अन्य सफाई के लिए बाई आती है।

प्रिया ने कहा– 'अच्छा बताओ, किटी पार्टियों और क्लब में कब जाती हो? मैंने तो सुमी के लिए सोनल बाई को रख दिया। मुझे तो रसोई घर का और अन्य कोई भी काम नहीं करना पड़ता। मैं तो सुबह तैयार होकर एवं नाश्ता करते ही अपने किटी पार्टी की सदस्यों के साथ ताश खेलने और हाउजी खेलने चली जाती हूँ। हमारे किटी पार्टी में दस सदस्या हैं। हम सब मिलकर वहाँ मौज-मस्ती करते हैं। जीवन का आनन्द लेती हूँ। मैं तो बच्चे की ओर देखती भी नहीं हूँ। क्यों गले में घण्टी बाँधू? क्यों रातों की नींद उड़ाऊँ। भगवान ने छप्पर फाड़ कर पैसा दिया है उसका आनन्द तो उठाऊँ। महीने में एक बार पार्टी देने की बारी आती है, पचास हजार में काम चल जाता है।

सुरभि सुनकर अवाक् रह गई, **फिर बोली**– 'भाभी! मैं तो इतना खर्च नहीं कर सकती। आपकी बातें मुझे अटपटी लग रही है। आपका सुमी के बिना कैसे मन लग रहा है। मैं तो बिना बच्चों के नहीं रह सकती। अपने कलेजे का टुकड़ा दूसरों के भरोसे पले और उनकी बाल क्रीड़ाओं का आनन्द वो उठाए यह मुझे तो उचित नहीं लगता। बच्चे के रूप-लावण्य को देखकर मन हरा हो जाता है। उनकी तुतलाती, खट्टी-मीठी बातें एवं उनकी बाल अदाएँ स्वर्गीय सुख देती हैं। कभी रूठना, कभी मनाना, खिलौने के लिए उछल-कूद करना, मचलना, उनके छोटे-छोटे जिज्ञासा भरे प्रश्न

आत्मविभोर कर देते हैं। सामने देखो भाभी! दीवार पर तरह-तरह के चित्र और आड़ी-तिरछी लकीरे बनाई हैं, उन पर मैं कभी भी पेन्ट नहीं करवाऊँगी। क्योंकि इनमें इनका बचपन झलकता रहेगा। उनको दूर रखेंगे तो परस्पर प्रेम कैसे बढ़ेगा। अपने संस्कार से वञ्चित रह जाएँगे। बच्चे प्यार के भूखे होते हैं।

इतने में बच्चे स्कूल से आते ही जोर-जोर से ममा-ममा चिल्लाते हुए सुरभि के गले लग जाते हैं। ममा! आप बहुत अच्छी हो, कहकर उसके आगे-पीछे झूमने लगते हैं। फिर बच्चे स्कूल की बातें सुनाने लगे। सुरभि बच्चों के कपड़े बदलने के बाद उनके लिए खाना परोस कर लाई। बच्चे कहने लगे, मामी! हम आपके हाथ से खाना खाएँगे। प्रिया ने तो अपने बच्चे को भी कभी अपने हाथ से खाना नहीं खिलाया था। लेकिन लज्जा के मारे, प्यार भरे शब्दों को टालने का साहस वह न कर सकी। अवनि बोली-मामी! पहला ग्रास मुझे देना। इतने में आर्य बोला-मुझे बहुत जोर से भूख लगी है, इसलिए पहला ग्रास मुझे। प्रिया ने दोनों हाथों में ग्रास लिए और एक साथ दोनों को खिलाने लगी। एक बच्चा कहने लगा-मुझे दाल के साथ खिलाइए, तो दूसरे ने कहा मुझे भिण्डी की सब्जी के साथ खिलाइए। प्रिया को आनन्दानुभूति होने लगी। विशेष सुख की अनुभूति होने लगी। बच्चों को खाना खिलाते-खिलाते ध्यान आया, मेरा सुमी क्या कर रहा होगा? सोनल ने उसके मनपसन्द का खाना बनाया होगा कि नहीं। दुपहरी में उसे सुलाया या नहीं? उसे आइसक्रीम बहुत पसन्द है। मुझे वह याद करता होगा या नहीं। अनेक प्रेम भरे प्रश्नों ने उसके मन-मस्तिष्क में घेरा डाल दिया। उसने अपने आपको बहुत कोसा-हाय! मैंने सौन्दर्य और पैसे के नशे में सुमी के बचपन की अमूल्य छवियाँ खो डाली। वह अपने आपको झकझोरने लगी।

प्रिया जिस आवश्यक कार्य को करने के लिए जयपुर आई थी, उसे निपटाकर दूसरे दिन ही कोलकाता के लिए रवाना हो गई। सुरभि ने बहुत कहा-'भाभी! आपके तीन दिन के टिकिट हैं।'

प्रिया ने कहा-'मैं अब सुमी के बिना एक क्षण भी कहीं भी नहीं रुक सकती।'

भारत की बेटी प्रियल

जोधपुर में एक श्रमिक परिवार रहता था। पति-पत्नी पत्थर तोड़ने का कार्य करते थे। उनके दो बच्चे थे, एक बेटी और एक बेटा। बेटी प्रियल दसवीं में और बेटा कुणाल चौथी कक्षा में पढ़ते थे। प्रियल हमेशा विद्यालय देर से पहुँचती थी। लगभग गणित का प्रथम कालांश समाप्त होने वाला था और प्रियल कक्षा में पहुँची। उसने अध्यापिका से पूछा-"मैडम! क्या मैं अन्दर आ सकती हूँ?"

अध्यापिका ने कहा-"आइए, फिर कहा कि तुम प्रतिदिन देर से आती हो, तुम इतना भी नहीं समझती हो कि गणित जैसे कठिन विषय में पीछे रह जाओगी। परीक्षा-परिणाम बिगड़ जाएगा। कल देर से आई तो अन्दर नहीं आने दूँगी। बताओ, तुम देर से क्यों आती हो?" इतनी बात सुनते ही प्रियल भभक-भभक कर रोने लगी। उसकी आँखों से अश्रुधारा बहने लगी।

प्रियल ने रोते हुए कहा-"मैडम! मुझे घर का पूरा काम करके छोटे भाई को स्कूल पहुँचाना पड़ता है। मेरी माँ नहीं है। मेरी माँ दो घरों में बर्तन साफ करने का काम करती थी, वह काम भी अब मुझे ही करना पड़ता है।"

जैसे ही प्रियल ने कहा कि मेरी माँ नहीं है। यह सुनकर अध्यापिका की आँखें भी नम हो गईं। उनको देखकर अन्य छात्राएँ भी भावुक हो गईं। कक्षा का वातावरण सहानुभूतिमय हो गया। अध्यापिका मन ही मन में पश्चात्ताप करने लगी। वह मन ही मन में सोचने लगी कि प्रियल इतनी अच्छी लड़की है। घर की व्यवस्था करने के पश्चात् भी कक्षा में प्रथम स्थान लाती है।

अध्यापिका ने पूछा-"तेरे पिताजी क्या काम करते हैं?"

प्रियल-"मेरे माता-पिता दोनों पत्थर तोड़ने और बजरी-सीमेण्ट की तगारियाँ भरकर कारीगरों को पकड़ाते थे। पिताजी अभी भी यही काम करते हैं। मम्मी

के फेंफड़े खराब हो गए, उन्हें तपेदिक की बीमारी लग गई थी। पिताजी के पास इलाज कराने के पैसे नहीं होते थे। बीमारी बढ़ती गई और दो वर्ष पूर्व उनका देहान्त हो गया। माँ के अभाव में पिताजी बहुत दुःखी रहते हैं। अब तो बुरी संगत में पड़कर शराब पीना सीख गए हैं। मैं पीने का मना करती हूँ पर मेरी सुनते ही नहीं है। रात को देर से घर आते हैं। भैया जल्दी सो जाता है। मैं अकेली घर में रहने के साथ पढ़ाई भी करती हूँ, इसलिए सवेरे उठने में भी देर हो जाती है। दीवाली के दिनों में तो रात-रात भर भी घर नहीं आते हैं। ये बातें मैं किसी को नहीं बताती हूँ क्योंकि मेरे पापा की छवि बिगड़ जाएगी। मौहल्ले में रहना दुष्कर हो जाएगा। मेरे पड़ोस में रहने वाली आण्टी अच्छी है, वह हमारा पूरा ध्यान रखती है। स्वयं के सामान लाती है तब हमारे भी ले आती है।

अध्यापिका–प्रियल! मैं तुम्हें गोद ले रही हूँ। आज से पढ़ाई का खर्च में दूँगी। स्कूल पोशाक भी मैं बनवाऊँगी। तू यह बर्तन साफ करने का काम छोड़ दे।

प्रियल–मैडम! मेरे घर का खर्च न चलेगा। मैं इन पैसों से कोठरी का किराया तो चुका दूँगी। किराया नहीं देंगे तो मकान मालिक कोठरी छुड़वा देगा। मैं यह छोड़ना नहीं चाहती, क्योंकि मेरे पड़ौसी बहुत अच्छे हैं।

अध्यापिका–मैं स्कूल फीस माफ करवाने का प्रयत्न करूँगी और छात्रवृत्ति के लिए भी कोशिश करूँगी।

समय बीतता गया। प्रियल ने बारहवीं की परीक्षा दे दी। परीक्षा फल निकला। पूरे राजस्थान में सर्वश्रेष्ठ स्थान प्राप्त किया। प्रियल ने 99 प्रतिशत अंक प्राप्त किए। समाचार पत्र वाले प्रियल के घर आए तो उसकी कोठरी देख दाँतों तले अंगुली दबा ली, उस सीधी-सादी लड़की को निहारने लगे। इस कोठरी में, ऐसा हीरा चमक रहा है। प्रियल लम्बी-पतली और दिखने में अच्छी लगती थी।

प्रियल के पिता को भी बुलवाया गया। उसके पिता घर के बाहर भीड़ और मीडिया वालों को देख स्तब्ध रह गए। उसको पता चला कि प्रियल राजस्थान में 12 वीं की परीक्षा में राजस्थान में सर्वश्रेष्ठ रही है तो बेटी को गले लगाकर रोने लगा।

मीडिया वालों ने प्रियल का फोटू खींचा। तत्पश्चात् उससे साक्षात्कार किया। उन्होंने प्रियल से प्रश्न किया कि आप कौनसी स्कूल में पढ़ती हो?

प्रियल–राजकीय सीनियर माध्यमिक बालिका स्कूल, जोधपुर।

मीडिया–आपको पढ़ने की प्रेरणा किससे मिली?

प्रियल–अपनी स्वर्गीय माँ से, मेरी माँ की इच्छा थी कि 'मैं बहुत पढ़ूँ'।

मीडिया–घर का कार्य कौन करता है?

प्रियल–'मैं बड़ी हूँ और एक छोटा भाई है। पिताजी खाने का टिफिन लेकर सुबह साढ़े आठ बजे दिहाड़ी पर चले जाते हैं।'

मीडिया–आप आगे क्या करना चाहती हैं?

प्रियल–मैं डॉक्टर बनना चाहती हूँ।

मीडिया–आपके पिताजी की आमदनी अल्प है फिर .....।

प्रियल–मेरी एक अध्यापिका 'प्रेरणा मैडम' ने मुझे गोद लिया है, मेरी पढ़ाई का खर्च वही देगी। मैं उनको भगवान के रूप में देखती हूँ। स्कूल में अर्द्धविश्राम के समय में वे मुझे गणित पढ़ाया करती थीं। उनसे आगे बढ़ने की प्रेरणा मिलती रहती है। मैं अपनी इस सफलता का पूरा श्रेय उनको ही देती हूँ। मैं उन्हें शत-शत नमन करती हूँ।

मीडिया–आप डॉक्टर ही क्यों बनना चाहती है?

प्रियल–मैं डॉक्टर बनकर रोगियों-पीड़ितों की सेवा करूँगी। क्योंकि इलाज के अभाव में मैंने अपनी माँ को खो दिया था।

मीडिया वालों ने प्रियल के अकेली की एवं बाद में उसके पिता और भाई के साथ फोटो लिये।

दूसरे दिन ही कितने ही समाचार पत्रों में 'भारत की बेटी प्रियल' शीर्षक के साथ उसकी जीवनी और उसके सद्विचार मुख-पृष्ठ पर छप कर आए। समाचार पढ़कर प्रियल के पिता का एक पियक्कड़ मित्र आया और कहने लगा कि हाय रे! मैंने तो बड़ा भारी अपराध कर दिया। कल ही मेरी पत्नी के गर्भ में बेटी भ्रूण पल रहा था, जिसकी मैंने हत्या करवा दी। मैंने प्रकृति और स्त्रीलिङ्ग के साथ अन्याय कर डाला। मेरे भी प्रियल जैसी एक पुत्री होती।

प्रियल के पिता–मित्र! मैंने प्रियल के माँ के मरने के बाद उसकी टोह नहीं ली। हम पुरुष वर्ग नारी को सम्मान देना नहीं चाहते हैं। नारी त्याग, तप, करुणा, वात्सल्य, दया, सहानुभूति, सहनशीलता का पुञ्ज है। मित्र! मैं प्रियल को एक खुशी देना चाहता हूँ कि अपनी मित्र मण्डली को शराब छुड़वाकर।

प्रियल–पिताजी आप मुझे आशीर्वाद दीजिए कि मैं डॉक्टर बनकर अपने शहर में निर्धनों के लिए अस्पताल खोलकर उनकी जी-जान से सेवा करूँ।

प्रियल के घर के बाहर पड़ौसियों की भीड़ लगी हुई थी, वे उसे कन्धों पर उठा कर नाचने लगे।

बाल बहादुर

राजकीय माध्यामिक विद्यालय खींचन, कक्षा सातवीं 'अ' के विद्यार्थियों ने यह तय किया कि होली की छुट्टियाँ प्रारम्भ होने के पहले वे लाल, पीले और गुलाबी रंग से होली खेलेंगे। बच्चे मन ही मन बहुत खुश थे। प्रधानाध्यापक भी बच्चों की इस खुशी में शामिल होते थे। होली की छुट्टियाँ प्रारम्भ होने से पहले बच्चे रंग और पिचकारियाँ ले आए। चपरासी ने पानी के ड्रम भरकर रख दिए। मध्याह्न के समय बच्चे स्कूल परिसर में होली खेलने लगे। रङ्गीन पानी की पिचकारियाँ परस्पर छूटने लगीं। वहाँ पर नल भी लगे हुए थे; बच्चे वहाँ से भी पानी लेने लगे। हा-हुल्लड़ पर आत्म-विभोर हो रहे थे। आर्यन होली खेलने में सम्मिलित नहीं हुआ। सामने बैठकर देखने लगा। कुछ समय बाद बच्चों की दृष्टि आर्यन पर पड़ी। सभी बच्चे उसे खेलने के लिए आग्रह करने लगे।

आर्यन- "मैं नहीं चलूँगा।"

बच्चों ने कहा- "क्यों नहीं चल रहे हो?"

आर्यन- "मैं देख रहा हूँ तुम होली खेलने में कितना पानी व्यर्थ खर्च कर रहे हो, साथ में पैसों की बर्बादी। यदि तुम गुलाल से खेल लेते तो पानी और पैसे बच जाते। जो पानी के लिए तरस रहे हैं, यह तो उनके प्रति अन्याय है।" मैं रंग के पैसे बचाकर बर्ड सेन्च्यूरी में साइबेरिया से आए पक्षियों के लिए दाना लेकर जाऊँगा और राष्ट्रीय पक्षी मोर के लिए भुने हुए चने लेकर जाऊँगा।

आरिश- "आर्यन! तुम तो बूढ़े जैसी बातें कर रहे हो। चलो, चलो। हम तो खेलकर, घर जाकर खाना खाकर; वापस मेरे घर इकट्ठे होंगे और ताश खेलेंगे। जो

जीतेगा वह कोल्ड ड्रिंक्स पिलाएगा।''

आदित–''चलो-चलो, हम सब मिलकर खेलेंगे, नाचेंगे, कूदेंगे।''

अनुज–''मैं नहीं चलूँगा। आर्यन के साथ पक्षियों को दाना चुगाऊँगा, उनकी अठखेलियाँ देखूँगा।''

सभी बच्चे कक्षा में चले जाते हैं। आर्यन-अनुज धुलण्डी के दिन एक बजे अभयरण्य में जाना तय करते हैं।

धुलण्डी के दिन आर्यन और अनुज घर से बस स्टेण्ड के लिए रवाना हो गए। रास्ते में एक नवयुवक बाइक से गिर पड़ा और बेहोश हो गया। उसके सिर से खून बह रहा था। लोग देखते हुए आ-जा रहे हैं, लेकिन उने उठा नहीं रहे हैं। बच्चों ने लोगों से कहा-''आप लोग इन्हें अस्पताल पहुँचाने में हमारी सहायता कीजिए।''

राहगीर–''यह मन्त्रीजी का लड़का है। गाँव का प्रसिद्ध गुण्डा है। बच्चों इसको हाथ लगा दिया तो लेने के देने पड़ जायेंगे। केस बन जाएगा और तुम फँस जाओगे। कौन कोर्ट-कचहरी के चक्कर मारेगा, व्यर्थ में परेशानी होगी।'' बच्चे असमञ्जस में पड़ गए, परन्तु वे डरे नहीं। अपना कर्त्तव्य समझकर नवयुवक को बचाने में लगे रहे। नवयुवक का मोबाइल पड़ा था। उन्होंने आव देखा न ताव, मोबाइल उठाया और 108 नम्बर की एम्बुलेन्स को बुलाया। अनुज ने दूसरा फोन नम्बर 100 पर लगाया। खून बह रहा था। आर्यन ने अपना बनियान उतारकर उसके सिर पर बाँध दिया। इतने में एम्बुलेन्स आ गई।

एम्बुलेन्स वाले–''बच्चों! यहाँ कोई बड़े लोग नहीं है, कोई घर वाला भी नहीं है, कैसे ले जाएँ?''

बच्चे–''हम घर वाले हैं, उठाने में आपकी सहायता करेंगे, कृपा करके देर न करें। हमारी तो जान सूख रही है।''

अनुज ने नवयुवक के मोबाइल से उसके घर वालों को सूचित कर दिया। ज्योंही घर वालों को सूचना मिली, वे सभी परिजन अस्पताल पहुँच गए। दुर्घटनाग्रस्त युवक के माता-पिता अपने बेटे को निश्चेत अवस्था में देखकर बिलख-बिलख कर रोने लगे। हमारे पाँच भाइयों में यह एक ही लड़का है। डॉक्टर साहब इसे बचा लीजिए। आई.सी.यू. वार्ड में डॉक्टरों की भीड़ थी, क्योंकि मन्त्रीजी का सुपुत्र था।

मन्त्री ने एक डॉक्टर को बुलाया और अपने पुत्र की चेतना और स्वास्थ्य के बारे में हाल जानना चाहा। डॉक्टर ने कहा–"मन्त्रीजी, आपके बेटे के सिर में गहरी चोट आयी है, खून भी बहुत निकला है। थोड़ी देर हो जाती तो.....।"

इस छोटे बच्चे की जागरूकता और तत्परता ने बचा लिया, अब आप खून देने के लिए तैयार रहिए। खून की आवश्यकता पड़ सकती है।

आर्यन–"डॉक्टर साहब मैं खून देने के लिए तैयार हूँ, आप उन्हें बचा लीजिए। वहाँ बैठे सभी लोग एवं डॉक्टर साहब आर्यन के सद्विचार और सहानुभूति से बहुत प्रभावित हुए।"

डॉक्टर–"बच्चे! तुम अभी बहुत छोटे हो, तुमने तो वह कार्य कर दिया, बड़ों के भी हाथ-पाँव फूल जाते हैं।" इतने में अनुज आ गया। दोनों बच्चे परिजनों के पास बैठ गए। करीबन दो घण्टे बाद डॉक्टर बाहर आए।

डॉक्टर–"मन्त्रीजी! आपके बच्चे को होश आ गया है और स्वास्थ्य में भी सुधार हो रहा है। कुछ समय पश्चात् आप मिल लेना।"

आर्यन और अनुज ने कहा–"हम जा रहे हैं।"

मन्त्रीजी–"तुम लोग कहाँ जा रहे थे?"

आर्यन ने कहा–"हम लोगों ने होली नहीं खेली, रंग के पैसे बचाए उनसे पक्षियों को दाना डालेंगे इसलिए वहाँ जा रहे थे, रास्ते में दुर्घटना देख उसमें लग गए।"

मन्त्रीजी–"तुम दोनों का नाम क्या है? कहाँ रहते हो?"

दोनों ने नाम और पता बता दिया। मन्त्रीजी ने बच्चों को पुरस्कार के रूप में अच्छी राशि थमाई। बच्चों ने नहीं ली। उन्होंने कहा यह तो हमारा कर्त्तव्य था। दोनों बच्चे नमस्कार कर घर चले जाते हैं। मोबाइल नम्बर भी दे गए।

दोनों बच्चों ने अपने-अपने घर जाकर दुर्घटना की बात बतायी। दोनों के माता-पिता ने कहा–"अच्छा काम करके आए हो, हम बहुत खुश हैं।" इतने में दोनों के घरों में फोन आया। आपके बच्चे बहुत समझदार और साहसी हैं। मेरे बेटे को नया जीवन दिया है। मैं आप सभी का बहुत कृतज्ञ हूँ।

मन्त्रीजी अपनी पत्नी से कहने लगे–"एक हमारा लड़का जिसने नशा करने में पैसों का दुरुपयोग किया और दुर्घटना ग्रस्त हो गया। ये साधारण घरों के बच्चे रंग के

पैसे बचाकर पक्षियों की सेवा करना चाहते हैं।''

तीन दिन पश्चात् दोनों बच्चे नवयुवक के स्वास्थ्य का हाल जानने के लिए अस्पताल आए। मन्त्रीजी ने आर्यन-अनुज से परिचय करवाया।

आर्यन ने पीड़ित नवयुवक से कहा-''भैयाजी! डॉक्टर साहब ने कहा आपने होली की रात को बहुत अधिक शराब पी ली, इसलिए बाइक से गिर गए थे। अब तो कभी नहीं पीओगे।'' नवयुवक का सिर शर्म से झुक गया। लज्जा के मारे आँख उठाकर दृष्टि मिलाने का भी साहस नहीं हुआ। कुछ समय तक सन्नाटा छाया रहा।

आर्यन-''आप प्रतिज्ञा करो, मैं अब नहीं पीऊँगा।''

आर्यन की शिष्ट-सुन्दर बातों से वह मुग्ध हो गया और बच्चों के हाथ में अपना हाथ रखकर प्रण किया-''मैं अब कभी शराब नहीं पीऊँगा।''

कुछ दिन पश्चात् दोनों बच्चों के घर मन्त्रीजी ने सूचना भिजवायी की गणतन्त्र दिवस, 26 जनवरी को दोनों बच्चों को 'बाल-बहादुरी' के लिए पुरस्कृत किया जायेगा। यह समाचार गाँव में हवा की तरह फैल गया। अनुज-आर्यन को सभी लोग बधाई देने पहुँचे।

होनहार बिरवान के होत चीकने पात

एक छोटे से देहात में माँ किशनी और पुत्र श्याम रहते थे। कुछ समय पूर्व श्याम के पिता का देहान्त हो गया था। किशनी का भाई छँवरलाल दिल्ली से अपनी बहिन की टोह लेने आया। बातों ही बातों में अपनी बहिन को कहा–श्याम को मेरे साथ भेज दे। मैं इसका प्रवेश अच्छी स्कूल में करवाना चाहता हूँ। गाँव में पढ़ाई अच्छी नहीं है। किशनी की पाँवों तले धरती खिसक गई। किशनी अपने भाई को मना नहीं कर सकी, क्योंकि उसका भाई उसे बहुत चाहता था। विचाराधीन बहिन को देख कर, बहिन तू भी हमारे साथ चल। अकेली क्या करेगी? किशनी समझती थी की दिल्ली शहर में दो जनों का खर्च कितना भारी पड़ता है।

किशनी–भाई मेरा परिवार यहीं पर रहता है, मैं खेतों में काम कर अपनी जीविका चला लूँगी। आप निश्चिन्त रहे। श्याम भी अपनी माँ को छोड़ना नहीं चाहता था, लेकिन उसने सोचा मेरा जाना हित में रहेगा। अपनी पढ़ाई की सामग्री और आवश्यक वस्तुएँ लेकर मामा के साथ चला गया। घर पहुँचते ही मामी ने लाड़–प्यार किया और कहने लगी–मेरे तीन बेटे हो गए। मामा के दो लड़के थे–महेन्द्र और सुरेन्द्र। अपने माता–पिता का श्याम के प्रति अत्यधिक प्यार देख वे उससे चिढ़ते और ईर्ष्या भी करते थे। तीनों को खाना साथ परोसा जाता था। कोई स्वादिष्ट वस्तु होती तो माँ से चुपके छीन कर खा जाते थे। उसकी दही की कटोरी में सब्ज़ी डाल देते थे। सब्जी में पानी डाल देते थे। कभी मिर्ची डाल देते थे। कोई न कोई बहाने से उसे खाते हुए को उठा देते थे। कॉपी में किए हुए गृहकार्य के पृष्ठ फाड़ देते थे और उस पर आड़ी–टेढ़ी लकीरें कर देते थे। श्याम कभी मामा–मामी के पास शिकायत नहीं करता था। खेलने जाते तो उसे गेंद नहीं देते और उसे पराये की तरह रखते थे। एक दिन खाना खाने बैठे

तो नमक दानी से सब्जी में नमक उड़ेल दिया, ऐसा करते उनकी माँ ने देख लिया। माँ ने दोनों बच्चों को डाँटा और उन्हें समझाया कि हमारे अहोभाग्य हैं इसलिए माँ का इकलौता बेटा हमारे यहाँ आया है "अतिथि देवो भव।" श्याम चुपचाप सहन कर लेता था। सुरेन्द्र, महेन्द्र उसे भगाने में लगे हुए थे।

सुरेन्द्र-महेन्द्र को चाट-पकौड़ी खाने का बहुत शौक था। चाट-पकौड़ी खाने का ऐसा चस्का लगा था कि अपने पापा की जेब से पैसे निकाल कर खाने लगे। छँवरलाल हिसाब करने लगा तो कुछ पैसे कम लगे, पर उसने ध्यान नहीं दिया। जेब से पैसे निकालने का कार्य चलता गया। एक दिन हिसाब करने बैठा तो पचास रुपए कम हो गए। छँवरलाल ने तीनों बच्चों को बुलाया और उनसे पूछताछ की। सुरेन्द्र-महेन्द्र ने श्याम का नाम ले लिया। पिता ने भी सोचा, श्याम के आने के पश्चात् ही पैसे कम होने लगे हैं।

मामा ने श्याम से पूछा, तो श्याम ने कहा, मामा मैंने पैसे नहीं निकाले हैं। मामा ने कहा-"श्याम सच बोल, पहले तो कभी पैसे नहीं निकले।" श्याम ने रोते हुए कहा- "मैं सच बोल रहा हूँ, मामा! मैंने नहीं निकाले"। श्याम को रोते देख दोनों भाई बहुत खुश हुए। इतने में मामी आई और कहा-मेरा श्याम ऐसा नहीं हो सकता। उसे गले लगाया और अपने पति से कहा, आपने हिसाब ठीक से नहीं किया है।

चोरी का कलंक लगने से श्याम का मन पढ़ने में नहीं लगता था। चुपके-चुपके रोता था। छुट्टी के दिन छँवरलाल कमरे में सो रहा था। अवसर पाकर सुरेन्द्र-महेन्द्र ने पिता की जेब में हाथ डाला और उसके पिता जग गए और उन्हें रंगे हाथों पकड़ लिया। अपने बेटों की करतूत समझ में आ गई। उन्हें बहुत समझाया गया। चोरी का राज खुलने से श्याम की जान में जान आई और पुनः मन लगाकर पढ़ने लगा। श्याम अपनी माँ को पत्र लिखता रहता था। माँ मैं आनन्द में हूँ। मेरी चिन्ता न करना। मामा-मामी बहुत प्यार से रखते हैं। मेरी पढ़ाई सुचारु रूप से चल रही है।

दिन बीतते गए। श्याम और सुरेन्द्र ने दसवीं कक्षा की परीक्षा दे दी। परिणाम समाचार पत्र में घोषित हुआ। सुरेन्द्र का रोल नम्बर प्रथम, द्वितीय और तृतीय श्रेणी में नहीं आया। सुरेन्द्र अनुत्तीर्ण हो गया। श्याम का भी परिणाम देखा तो द्वितीय, तृतीय श्रेणी में रोल नम्बर नहीं था। श्याम ने कहा-"मित्रों! प्रथम श्रेणी में देख लो।" सुरेन्द्र ने

कहा–''तू किस तालाब में मुँह धोकर आया है? सभी मित्र श्याम पर हँसने लगे। वह सबको शान्त भाव से देखता रहा। एक भले मित्र ने श्याम का परिणाम प्रथम श्रेणी में देखा तो पता चला वह मेरिट में आया है। सब मित्रों के मुँह फक पड़ गए और आश्चर्य करने लगे। सभी मित्र दौड़ कर श्याम के मामा-मामी को बधाई देने गए। मामा-मामी ने श्याम की पीठ थपथपाई और कहने लगे-तूने हमारा सपना साकार कर दिया। मामा के आँखों में खुशी के आँसू लुढ़कने लगे। सुरेन्द्र रो रहा था।

श्याम ने कहा–''भैया रोओ मत, उसे गले लगा कर ढाढ़स बँधाया और कहा-आपने परीक्षा में बैठने की हिम्मत तो की। अनुत्तीर्ण तो व्यक्ति को आगे बढ़ने की प्रेरणा करता है उसका भी महत्त्व है।''

श्याम ने मामा-मामी को कहा–''मैं अपनी माँ के पास जाना चाहता हूँ। मैं आपका कृतज्ञ हूँ, आभारी हूँ। आपने मुझे विद्यादान दिया है, यह तो महादान है। आपका प्यार और उपकार रिश्ता, निभाने की व्यवहार कुशलता को कभी भी नहीं भूल सकता हूँ।''

सुरेन्द्र और महेन्द्र ने कहा–''श्याम तू मत जा! हमें छोड़ कर मत जा। अब हम तुझे किसी प्रकार का कष्ट नहीं देंगे। तेरी मिठाई नहीं छीनेंगे। तेरी सब्जी में पानी भी नहीं डालेंगे। दोनों फूट-फूटकर रोने लगे। मामा-मामी ने कहा-इसकी माँ पाँच साल से अकेली रह रही है। अपने योग्य पुत्र को देखकर तेरी भुआ कितनी खुश होगी। अभी जाने देते हैं। इसे अपना धन्धा ढूँढ़ना है।

श्याम अपने गाँव चला गया। माँ के चरण छू कर आशीर्वाद लिया। माँ ने बेटे पर हाथ फेर कर निहारा। माँ ने अश्रुमिश्रित नयनों से युक्त होकर कहा-''बेटा! मेरा एक दिन एक युग के समान बीता।'' श्याम-''माँ! मैं तुम्हें अकेला नहीं रखूँगा। नौकरी करूँगा, आगे पढ़ूँगा और आपको बुला लूँगा।''

माँ–दसवीं कक्षा के आगे भी पढ़ाई होती है।

श्याम–हाँ माँ, जैसे डॉक्टरी, इञ्जीनियरिंग, वकालात, सी.ए.और एम.बी.ए. आदि। मैं सी.ए. करूँगा।

माँ–''बेटा! पड़ोसी चुन्नीलाल जी कोलकाता रहते हैं। उन्होंने कहा था, श्याम पढ़कर आ जाएगा तब उसे मेरे साथ भेज देना। मैं उसकी नौकरी लगवा दूँगा।''

किशनी चुन्नीलाल जी से बात कर आई। उन्होंने कहा–"मैं कल कोलकाता जाऊँगा, उसे साथ ले जाऊँगा।"

दूसरे दिन श्याम और चुन्नीलाल जी कोलकाता के लिए रवाना हो गए। किशनी श्याम को देखती रही जब तक वह आँखों से ओझल नहीं हुआ।

चुन्नीलाल ने एक ढाबे में नौकरी लगवा दी। खाना और 20 रुपए माहवार पर तय हुआ। श्याम के रहने का कोई ठिकाना नहीं था। रात को अपना बैग सिरहाने रखकर सड़क पर चद्दर लगा कर सो जाता था।

एक दिन ढाबे का मालिक आवश्यक कार्य हेतु ढाबा खोलने जल्दी आया। श्याम सड़क पर सो रहा था। सेठ ने श्याम से पूछा–तुम सड़क पर क्यों सोते हो?

श्याम ने कहा–"मैंने घर नहीं लिया है।" प्रतिमाह 10 रुपए मैं अपनी माँ को भेजता हूँ और 10 रुपए में मेरा खर्च चलाता हूँ। आप मुझे ढाबा में एक अलमारी दे दीजिए, जिसमें मैं अपना बिस्तर, कपड़े और आवश्यक सामान रख सकूँ। रात में ढाबे की चौकीदारी कर दूँगा। सेठ का विश्वास पात्र बन गया था, इसलिए अलमारी दे दी।

श्याम ने ढाबा की सुव्यवस्था कर उसकी काया पलट दी। ग्राहक दिन दुगुने और रात चौगुने होने लगे। घर-घर टिफिन पहुँचाने वाला श्रमिक छुट्टी पर जाने वाला था।

सेठ ने श्याम से कहा–"तुम रमेश के साथ जाकर टिफिन के ग्राहकों के घर देख लो; कुछ दिन टिफिन तुम्हें पहुँचाने होंगे।" श्याम टिफिन समय पर पहुँचा कर एक घण्टे में आ जाता था। ग्राहकों की शिकायत आती थी कि टिफिन समय पर नहीं आता है, वह शिकायत अब नहीं आती थी। सेठ श्याम की कर्मठता और नम्रता से बहुत प्रसन्न था। वह दिन में काम करता और रात को चौकीदारी के साथ पढ़ाई करता था। बी.कॉम कर लिया और सी.ए. के फार्म भर दिए। सेठ को लगा कि यह लड़का बहुत ही ईमानदार और परिश्रमी है। ढाबे में उसको एक कमरा दे दिया। कमरा मिलते ही अपनी माँ को बुला लिया और आराम से रहने लगे। श्याम सी.ए. के एक पार्ट में उत्तीर्ण हो गया। दूसरे पार्ट में गोल्ड मेडल प्राप्त किया। अब श्याम के लिए बड़ी-बड़ी कम्पनियों से नौकरी के लिए आमन्त्रण आने लगे।

ढाबे के सेठ ने कहा–"श्याम! मैं तुझे नहीं जाने दूँगा। मेरे कोई सन्तान नहीं

है; मैं पूरा ढाबा सम्भलवा रहा हूँ।''

श्याम–''सेठ जी! सेठ तो आप ही रहेंगे। आपकी मेहनत कृपा से मैंने सी.ए. कर लिया है। अब मैं सी.ए. करने वाले छात्रों को नि:शुल्क पढ़ाई करवा रहा हूँ।''

उसी समय दिल्ली से मामा का फोन आया कि अधिक वर्षा के कारण मेरा घर ढह गया है। हम बेघर हो गए हैं।

श्याम–''मामा! मैं आपको लेने आ रहा हूँ।'' श्याम हवाई जहाज से मामा के परिवार को अपने घर (कोलकाता) ले आता है, सभी को पलकों पर बिठाए रखता है। ''मामी तो उसका आदर्श है।'' महेन्द्र-सुरेन्द्र को ढाबा में काम दिला देता है। श्याम अपने मामाजी को सेठ से मिलवाता है।

सेठ–''छँवरलालजी! श्याम बहुमुखी प्रतिभा का धनी है। कर्मठ और ईमानदार है। इसकी नम्रता और अपनापन ने मुझे बहुत प्रभावित किया है। इसी के कारण ढाबा चमक रहा है। मैं इसको गोद लेना चाहता हूँ।''

मामा–''होनहार बिरवान के होत चीकने पात।''

⊠⊠⊠

माँ का अहं

दिव्या और परी दोनों सहेलियाँ थी। उन दोनों का घर परस्पर निकट में था। दोनों साथ-साथ पढ़ती और साथ-साथ खेलती थी। दोनों बड़ी सरल और विनम्र थी। दिव्या अति सुन्दर और विलक्षण बुद्धि की लड़की थी। उसकी माँ को उस पर बड़ा नाज़ था, क्योंकि वह सी.ए. में पहली बार में ही उत्तीर्ण हो गई थी। वह इकलौती सन्तान थी। परी ने अभियन्ता बनकर राजकीय नौकरी कर ली।

परी दिव्या के घर आई। दोनों आपस में खुलकर बातें करने लगीं।

दिव्या–"अरी, परी! कल एक लड़का मुझे देखने आया था। उसकी सी.ए. में 45वीं रेंक आई। रौबीला सुन्दर सलोना है। उसने मेरे से पढ़ाई सम्बन्धी प्रश्न किए। पश्चात् मेरे से पूछा-आपको खाना बनाना आता है?"

मैंने कहा–"आता तो नहीं है, बनाना सीख जाऊँगी।"

लड़के ने कहा–"खाना तो मैं होने वाली जीवन संगिनी के हाथ का ही खाऊँगा।"

तपाक से मेरी माँ ने कहा–"मेरी बेटी सी.ए. पढ़ी हुई है और खाना बनाएगी। यह तो चाँद का टुकड़ा है, मेरे कलेजे की कोर है। इसे सी.ए. का ऑफिस खोलना है।" माँ को सम्बन्ध पसन्द नहीं आया। कुछ समय पश्चात् और लड़का आया। उस लड़के से माँ ने पूछा-"आपके खाना कौन बनाता है?" माताजी, मेरे घर में नौकर-चाकर बहुत हैं, लेकिन खाना मेरी माँ ही बनाती है। मेरे घर में नौकरों के हाथ का खाना नहीं खाते हैं। माता जी मुझे दिव्या पसन्द है। माँ-"देखो जी, मैं वहाँ सम्बन्ध करूँगी, जहाँ मेरी लाडली को खाना बनाना नहीं पड़े और बच्चा होने पर उसे

बच्चा भी रखना न पड़े। मैंने इसे इतना क्यों पढ़ाया, जब खाना ही बनाना है।''

लड़के ने कहा–''दिव्या के साथ मैं भी हाथ बटाऊँगा।'' बेचारा आया था चौबेजी बनकर और दूबेजी होकर चला गया। इस तरह कितने ही सम्बन्ध आए, उनमें कुछ न कुछ कमी निकाल कर माँ रद्द कर देती हैं। इतनी नकचढ़ी है कि कोई रिश्ता पसंद ही नहीं आता। दिव्या माँ की बातों से परेशान थी। परी अपनी सहेली की बात सुनकर चली गई।

दिव्या माँ से कहने लगी–''माँ! सम्बन्ध तो एक से बढ़कर एक आए हैं, उनमें से अच्छा देखकर कर लो।''

माँ–''तुझे दुनियादारी का अनुभव नहीं हैं। मैं तुझे वहाँ दूँगी रानी बनकर रहेगी।''

बेटी–''मुझे काम करना अच्छा लगता है। नौकरों पर निर्भर रहना मुझे पसन्द नहीं है। मैं स्वावलम्बी रहना चाहती हूँ। नौकरों से काम करवा कर निठल्ली बन जाऊँगी। बच्चे तो मुझे बहुत ही प्रिय लगते हैं। अपने बच्चे के साथ मैं ज़्यादा आनन्दित रहूँगी, उसको दूध पिलाऊँगी, उसको नहलाऊँगी-धुलाऊँगी, उसे सँवारूँगी और लौरियाँ गाकर सुलाऊँगी। उसको पैजनी पहना कर उसके साथ नाचूँगी। मेरा बचपन पुन: लौट आएगा। उसे अच्छी-अच्छी कहानियाँ सुनाऊँगी। उसके मीठे-मीठे स्वप्नों की भाव-भंगिमाएँ देखकर फूल जाऊँगी।''

दिव्या की माँ ने अपनी बेटी की बातें, सुनी-अनसुनी कर दी, क्योंकि उसकी आँखों पर अहंकार एवं महत्त्वाकांक्षा का चश्मा चढ़ा हुआ था। एक दिन परी फिर दिव्या से मिलने आई। बहुत खुश लग रही थी।

दिव्या ने कहा–''क्या बात है? मन में लड्डू फूटे जा रहे हैं। उसने ऊपर से नीचे तक निहारा।''

''तेरे लिए शुभ सन्देश लेकर आई हूँ।'' परी ने मोबाइल निकाला और मंगेतर का छाया चित्र (फोटू) दिखाया। **दिव्या**–''लड़का रौबीला और साँवला सलोना लग रहा है। अरी दिव्या! साँवले तो श्रीकृष्ण भी थे, पर वे कितने महान् पुरुष थे। दिव्या–''लड़का क्या कर रहा है?''

परी–लड़का आई.आई.टी. अभियन्ता है बाहर की कम्पनी एडोबी में नौकरी

कर रहा है। सुन, दिव्या! मुझे उसके विचार बहुत अच्छे लगे। ''उसने स्पष्ट कहा कि मैं साधारण परिवार का हूँ। माता-पिता बड़े आदर्श हैं। दोनों बहिनें अच्छे घर ब्याही हुई है। मुझे अपने माता-पिता के संग ही रहना है।''

परी– ''मैंने लड़के से कह दिया कि साथ रहने में मुझे कोई आपत्ति नहीं है।''

परी– ''दिव्या! तू कहाँ खो गई है?'' सुन री-मैं आफिस जाऊँगी और वापस आऊँगी तो घर खुला मिलेगा। मैं सासू माँ को बहुत प्यार दूँगी, वह वर्षों से मेरी राह देख रही हैं, मेरे आगे-पीछे घूमेंगी। ''सास बिना ससुराल कैसा?'' आशीर्वाद और अनुभव बिन माँगे मिल जाएँगे। उनकी यह अमूल्य धरोहर मेरे साथ रहेगी, मेरा पथ प्रदर्शन करती रहेंगी।

दिव्या–बता, विवाह कब रचा रही है ?

परी–कल ही तो सगाई पक्की हुई है और तुझे बताने चली आई। अब चलती हूँ। वह चली जाती है।

दिव्या मन ही मन में सोच रही है कि परी के घर वाले समय और औकात को समझते हैं, अतः ठीक समय पर विवाह करने का निर्णय ले लिया। मेरी माँ तो हर रिश्ते में कमियाँ निकालती रहती है। मेरी माँ हवा में बातें करती है, ऊँचे-ऊँचे स्वप्न देखती है। स्वप्न कभी सच्चे हुए?

समय बीतता गया। उसकी आयु के अनुसार उसके मुख की चमक कम होने लगी। जो सामने से सम्बन्ध आते थे वे सब रुक गए। समाज में यह चर्चा फैल गई कि उसकी माँ के तेवर बहुत ऊँचे हैं, उनके घर जाना अपनी मान-मर्यादा को ठेस पहुँचाना है।

दिव्या ने स्वयं का सी.ए. का ऑफिस खोल दिया। कई फैक्टरियों के आयकर-विक्रयकर का कार्य सम्भाल लिया। फैक्टरियों के मालिक काम से खुश थे। समय पर कार्य पूर्ण करना और सही रूप से करना उसके ऑफिस की विशेषता थी। कार्य अधिकता के कारण कई सहयोगियों को रखना पड़ा। ऑफिस में आयुष नाम का लड़का था। उसका मित्र सौम्य प्रतिदिन ऑफिस छूटने के कुछ समय पहले आया करता था। उसने अपने वाक् चातुर्य से सबको मुग्ध और आकर्षित कर लिया। ऑफिस छूटने के बाद दोनों मित्र कॉफी पीने जाया करते थे।

एक दिन आयुष ने दिव्या से कहा–दीदी! आप भी कॉफी पीने चलें। दिव्या ने मना कर दिया। धीरे–धीरे दिव्या सौम्य के समीप आने लगी। मित्रता इतनी बढ़ गई कि सौम्य ने जीवन साथी बनने का प्रस्ताव रखा। दिव्या ने सोच समझ कर हामी भर ली। दिव्या ने अपने पिता के सामने कभी सौम्य की बात नहीं की। अपने विवाह का निर्णय भी नहीं बताया। वह जानती थी कि वे इस सम्बन्ध में रोड़ा अटकाएँगे।

दोनों कोर्ट गए। विवाह की तिथि निश्चित हुई। उसी दिन से कोर्ट के बाहर एक माह के लिए विवाह का नोटिस लगाया गया। एक माह पश्चात् दिव्या, परी, सौम्य और आयुष कोर्ट पहुँचे। कोर्ट की खाना पूर्ति कर सब दिव्या के घर आए। दिव्या ने घण्टी बजाई। दिव्या की माँ ने दरवाजा खोला। दरवाजा खुलते ही दिव्या शादी की पोशाक में सजी–धजी हुई थी साथ में वर भी सजा–धजा नज़र आया। गले में गुलाब के पुष्पों की माला सुगन्ध के साथ पंखुडियाँ भी बिखेर रही थी, माँ की आँखें फटी की फटी रह गई।

बोली दिव्या!

हाँ, माँ! आप जो देख रही हो, सत्य है। माँ ने दिव्या के पिता को बुलाया। उसके पिता ने उन्हें अन्दर बुलाया और आशीर्वाद दिया।

दिव्या के पिता ने सौम्य से नाम पूछा–सौम्य सरगरा। माँ–सरगरा!

दिव्या–हाँ माँ! सौम्य विद्युत कार्यालय में अभियन्ता है। अच्छा वेतन है और स्वस्थ विचारों का व्यक्ति है।

माँ–"मैं इस सम्बन्ध से खुश नहीं हूँ। मेरे सामने से चले जाओ।"

पिताजी–"ठहरो! मधु (माँ) हम समय को समझ नहीं पाए। हम आँखों पर पट्टी बाँधे हुए थे, हम घमण्ड में चूर थे। उसका परिणाम तो हमें भुगतना ही होगा।"

ईमानदार

दीपचन्द को मालिक ने त्यागपत्र पकड़ा दिया। दीपचन्द पढ़कर स्तब्ध हो गया। बड़ी दुविधा में पड़ गया, यह क्या हो गया? मेरी माँ को कैसे बताऊँगा की कम्पनी के मालिक ने मुझे नौकरी से निकाल दिया। हाय! मेरी माँ अन्धी, दूसरे घरों के मिर्च-मसाले कूटकर मुझे पाला-पोसा और दसवीं तक पढ़ाया। माँ को छोड़कर अन्य स्थान भी कमाने नहीं जा सकता। एक क्षण में यह सारी बातें मस्तिष्क में घूम गईं।

त्याग-पत्र पकड़ने के दो मिनट पश्चात् साहस बटोर कर सेठ से पूछा-"मैंने ऐसा कौनसा कार्य किया? जो आपने मुझे नौकरी से निकाल दिया।"

सेठ-"भण्डारपाल ने मुझे बहुत बार कहा कि यह छोकरा सही काम नहीं करता है। नाप-तौल भी ठीक नहीं करता है।"

दीपचन्द-"सेठजी! काँटा तो एक टन लोहा बताता है तो मैं टन ही लिखता हूँ। भण्डारपालजी कहते हैं डेढ़ टन लिखो। मैं धोखा-धड़ी का काम नहीं कर सकता हूँ।"

सेठ-"ऐसी बात है तो तुम्हारा त्याग-पत्र मैं फाड़ देता हूँ, तुम पुनः काम पर लग जाओ।"

दीपचन्द-"मैं अब यहाँ काम नहीं करूँगा।" उसने सोचा कि यदि मैं यहाँ रह गया तो भण्डारपाल प्रतिदिन मेरे से झूठा नाप-तौल करवाएगा। यह सेठ का पुराना नौकर है।

बेचारा! जेठ माह की गर्मी में पसीने से लथपथ धूप से झुलसा हुआ घर आकर धड़ाम से बैठ गया। वह प्यास से मर रहा था, लेकिन पानी पीने की शक्ति उसमें नहीं बची। मन में विचारों का मन्थन होने लगा। अन्त में इस निर्णय पर पहुँचा कि यह तो ईमानदारी का पुरस्कार है।

दूसरी नौकरी ढूँढ़ने निकला तो एक मित्र ने बताया कि शिव-मन्दिर में तुम्हें नौकरी मिल जाएगी। दूसरे दिन दीपचन्द ठीक समय मन्दिर पहुँच गया। वहाँ उसे व्यवस्थापक ने भण्डारपाल की नौकरी दे दी। उसे खाना मन्दिर से मिल जाता था। वह केवल माँ का खाना बनाकर जल्दी काम पर आ जाता था। मन्दिर में भजन-कीर्तन होते रहते थे, उसे वहाँ बड़ा आनन्द आता था। श्रद्धालु लोग प्रसाद चढ़ाते थे उसे भी प्रसाद मिलता रहता था, स्वयं नहीं खाता अपनी माँ के लिए घर लाया करता था। बड़ा मन्दिर था। खूब सामान आता-जाता था। उसने हिसाब के लिए पञ्जिका मँगवाई। कितना सामान आया, कितना सामान गया उसका हिसाब रखता था। घर जाने के पहले पूर्ण हिसाब मिलाकर जाता था। काम व्यवस्थित ढंग से होने लगा। मन्दिर के सभी कर्मचारी उससे खुश थे, लेकिन व्यवस्थापक जी खुश नहीं थे, क्योंकि उन्हें कोई सामान घर ले जाने के लिए नहीं मिलता। सब हिसाब पञ्जिका में अंकित होता था। दीपचन्द सबसे मेल-मिलाप रखता था। चेहर पर सद्-विचारों की चमक थी।

व्यवस्थापक को, दीपचन्द काँटा लगने लगा। यह तो ऐसा व्यक्ति है कि न तो खाता, न ही खाने देता है। इस काँटे को उखाड़ फेंकना है। उसने एक युक्ति सोची।

एक दिन दीपचन्द के घर जाने का समय हुआ तब व्यवस्थापक ने अपने चाटुओं को दीपचन्द से बातें करने में लगा दिया। कुछ चापलूसों ने भण्डार में जाकर कीमती सामान निकाल लिया और दीपचन्द को पता नहीं लगने दिया। सब लोग बातें करके अपना काम निकाल कर चले गये। दीपचन्द भण्डार का द्वार बन्दकर ताला लगाकर घर चला गया। दूसरे दिन व्यवस्थापकजी ने दीपचन्द से वही सामान माँगा जो कल अपने घर ले गया था। दीपचन्द भण्डार में सामान ढूँढने लगा तो उसे मिला ही नहीं। उसने व्यवस्थापक को कहा कि आप जो सामान माँग रहे हैं वह मिला ही नहीं, वह तो चोरी हो गया है।

व्यवस्थापक ने कहा-"ताले की चाबी तुम्हारे पास है और ताला भी टूटा नहीं है, बताओ कैसे चोरी हो सकती है। अवश्य सामान तुम अपने घर ले गये हो।"

दीपचन्द-"मैं ऐसे काम नहीं करता हूँ। आप से विनति है, घर चलकर देख लीजिए।"

व्यवस्थापक-"घर पर चोरी का माल कौन रखेगा, तुमने सामान का तीया-पाँचा कर दिया होगा।"

दीपचन्द–''आप मुँह से ऐसी बात नहीं निकालें मेरी माँ ने यह शिक्षा दी है कि कुछ भी हो जाय झूठ नहीं बोलना और ईमानदार रहना।''

व्यवस्थापक–''तुम्हें नौकरी से निकाला जा रहा है। ऐसे चोरों की आवश्यकता मन्दिर में नहीं है। तुम्हें गायब हुए सामान की राशि तो चुकानी होगी।''

दीपचन्द–''मेरे घर में तो फूटी कौड़ी भी नहीं है, मैं राशि कैसे चुकाऊँ। मैं चोर नहीं हूँ।''

व्यवस्थापक–''तुम्हारे घर का मकान है, उसका पट्टा मेरे पास गिरवी रख दो, जब रकम चुका दोगे तब पट्टा तुम्हें लौटा दूँगा।'' उसने लिखा-पढ़ी करवा ली।

दीपचन्द चिन्ता के मारे पानी-पानी हो रहा था। माँ को कैसे मुँह दिखाऊँ। कमाया कुछ नहीं और घर गिरवी में रख दिया। घर जाकर सारी घटना माँ को सुनाई।

माँ ने कहा–''मेरा बेटा ईमानदार है, चोरी नहीं कर सकता है। यह तो दूसरा श्रवणकुमार है। श्रवणकुमार के माता-पिता अन्धे थे, वह उनकी सेवा करता था। तेरी माँ भी अन्धी है तू भी मेरी सेवा करता है दीप बेटा! ईमानदारी और स्वाभिमानी नहीं छोड़ना। अपनी भुजा के बल काम करो, निराश नहीं होना है।''

दीपचन्द माँ से जितना डर रहा था, उससे ज्यादा उसे सम्बल मिल गया।

दीपचन्द सुलझा हुआ युवक था। उसने अपने जीवन का एक क्षण भी नहीं खोया और तुरन्त पाँच रुपये लेकर बाजार गया और पुराने समाचार पत्र लेकर घर आया। घर में आटा की लेई बनाई और कागज की थैलियाँ बनाना आरम्भ किया। उसने सोचा यह धन्धा ठीक है कम राशि से काम चल जाएगा। प्लास्टिक थैलियों पर रोक लगा दी गई, इसलिए यह काम ठीक चल जाएगा। कम पैसों का काम मेरे लिए ठीक रहेगा। दीपचन्द का व्यवहार गली वालों के साथ अच्छा था। गली के बच्चों ने दीपचन्द से कहा-''दीप भैया! हम भी आपके साथ काम करेंगे।'' सभी बच्चे अपनी योग्यतानुसार सहायता करते थे। थैलियों की गिनती करके उसकी ढ़ेरियाँ लगा देते। काम-काम के साथ दीपचन्द उन्हें गिनती-पहाड़े की मौखिक अभिव्यक्ति करवा देता था और साथ-साथ थैलियों के माध्यम से जोड़ना-घटाना भी सिखा देता था। बच्चे गणित में अच्छे हो गए। दीपचन्द रात-दिन काम में लगा रहता था। उसने यह लक्ष्य बना लिया कि जल्द से जल्द राशि इकट्ठी कर घर का पट्टा लाना है।

बच्चों के साथ काम करने में उसे आनन्दानुभूति होती थी। बच्चों का परीक्षा

परिणाम अति उत्तम रहा। इस कारण घर में बच्चों की भीड़ लग गई। घर छोटा पड़ने लगा, उसने बच्चों को पढ़ाने के लिए बड़ा स्थान किराये पर ले लिया। उसकी लगन सभी कार्यों में रंग लाई।

दीपचन्द ने माँ से कहा– ''माँ! मुझे पढ़ाना बहुत अच्छा लगता है। मैं आपके नाम का विद्यालय खोलूँगा। नाम रखूँगा 'माँ आध्यात्मिक विद्यालय'। उसमें अनिवार्य विषय रखूँगा नैतिक एवं व्यावहारिक शिक्षा। भाषा का माध्यम हिन्दी रखूँगा ताकि बच्चे हिन्दी भाषा में रुचि लें। यह विषय मैं स्वयं पढ़ाऊँगा।

थैलियों के काम में इतना कमा लिया कि गिरवी के पैसे उतारने और विद्यालय खोलने में सक्षम हो गया। दीपचन्द ऋण की राशि लेकर व्यवस्थापकजी के पास पहुँचा।

व्यवस्थापकजी ने दीपचन्द का प्रफुल्लित और ओजस्वी मुख देखा और अवैध राशि हाथ में लेते ही चक्कर आया और नीचे गिर गए। दीपचन्द ने उनके सिर पर हाथ फेरा और मन्दिर के कर्मचारियों को बुलाकर उन्हें अस्पताल ले गया। डॉ. साहब ने पक्षाघात होना बताया। व्यवस्थापकजी के घर पर घटना सूचित की गई, तब पता चला कि उनका लड़का बाहर गया हुआ है, उसे आने में दो दिन लगेंगे। दो दिन तक दीपचन्द व्यवस्थापक जी की सेवा में रहा और उसका मुस्कुराहता हुआ चेहरा अनोखी सान्त्वना पहुँचा रहा था।

व्यवस्थापकजी का लड़का आया तब पश्चात्ताप की अग्नि में जलते हुए व्यवस्थापकजी ने अपने पुत्र के समक्ष हाथ जोड़ते एवं गिड़गिड़ाते हुए शब्दों में दीपचन्द से क्षमा माँगी।

व्यवस्थापकजी– ''बेटा दीप! मेरा जैसा दुर्व्यवहार कोई अपने शत्रु के साथ भी नहीं करता है। ऐसा घिनौना व्यवहार तेरे साथ मैंने किया है। निरपराधी से अवैध राशि लेते ही हृदय और हाथ लड़खड़ाने लग गए और मुझे असाध्य रोग ने जकड़ लिया। मैंने तो चोरी का कलंक लगाकर तुम्हारी जीविका छीन ली। ऐ निस्वार्थी महान् युवक! तेरे मुँह पर तो रोष की एक रेखा भी नहीं झलक रही है। मुझे क्षमा कर दे, मुझे क्षमा कर दे।

''क्षमा शोभती उस भुजंग को, जिसके मुख गरल हो।''

बिना कारण न करें हिंसा

ज्येष्ठ का महीना था। गर्मी परवान चढ़ गई। वृक्ष भी मुरझाने लगे, प्राणिमात्र ठण्डक चाहते थे। हवा भी स्तब्ध थी।

सौम्या प्रातः टहलने के लिए अपनी सखी आल्या के उद्यान में गई।

सौम्या– 'ये कंकड़ इकट्ठे क्यों किए हैं? इनसे क्या करोगी?'

आल्या– 'कुत्तों ने उद्यान में खड्डे कर दिए हैं। मरवा और गुलाब के पौधे तहस-नहस कर डाले हैं, इन पत्थरों से उन्हें मारूँगी। लकड़ी से उनकी टाँगे तोड़ दूँगी, ताकि वे फिर कभी उद्यान में उजाड़ न करें।

सौम्या– ''इनको गर्मी लगती है तब ये ठण्डी मिट्टी को खोदकर उसमें बैठ जाते हैं। हम लोग तो पंखें, कूलर, ए.सी. चलाकर बैठ जाते हैं, ये बेचारे और क्या कर सकते हैं?''

आल्या– ''गन्दगी भी करते हैं।''

सौम्या– ''ये जंगली और गली के कुत्ते हैं, ये प्रशिक्षित नहीं है फिर भी समझदार होते हैं।''

सुन! अपनी भारतीय परम्परा में जब रोटी बनती है तब पहली चार रोटी गाय-कुत्तों के लिए निकाली जाती है। मैं प्रतिदिन सवेरे गाय-कुत्तों को रोटी देने जाती हूँ तब कुत्तों की प्रतिक्रियाएँ देखती रहती हूँ। इनमें एकता, निःस्वार्थ प्रेम, स्वामी-भक्ति, वात्सल्य आदि प्रवृत्तियाँ प्रचुर मात्रा में मिलती हैं। कुत्तों को रोटी देती हूँ तब वे मेरे पैरों में लोट-पोट होकर प्रेम दर्शाते हैं।

काली कुत्ती का एक पिल्ला मर गया वह उसके पास बैठी-बैठी रोती रही। पिल्ले को उठाकर ले गए तब बेचारी शान्त हुई। ये बोल नहीं सकते हैं। प्रेम, वात्सल्य

के उदाहरण हैं। बूढ़े और बीमार कुत्तों के सामने रोटी डालते हैं तो अन्य कुत्ते उनकी रोटी नहीं खाते हैं। वे दया के भाव रखते हैं।''हमें तो उनके गुणों को जीवन में उतारना चाहिए।'' तू अपने उद्यान में ऐसा प्रबन्ध करवा ले कि वे अन्दर नहीं आए। मुझे तो सड़कों पर घूमते-सोते बड़े प्रिय लगते हैं। मौहल्ले में अपरिचित व्यक्ति को देख भौंकने लग जाते हैं हमें सूचित कर देते हैं। अनजान लोग आए हैं।

उपवन में आगे बढ़ी तो आल्या पुनः बचपना करने लगती है। पेड़-पौधों के पत्ते, फूल और कच्चे फल तोड़ने लगी। एक भी पौधा और पेड़ को अछूता नहीं छोड़ा।

सौम्या-''अरे! आल्या, क्या कर रही है?''

आल्या-''मुझे फूल बहुत पसन्द हैं।''

सौम्या-''तुझे पसन्द हैं तो कुछ तोड़ ले, पर तू तो सभी पेड़-पौधों को कष्ट पहुँचा रही है।''

आल्या-''कैसा कष्ट? ये तो होते ही तोड़ने के लिए।''

सौम्या-''तुझे जितनी आवश्यकता है उतना ही तोड़, अधिक तोड़ना पाप है। ये सजीव हैं। जो क्रियाएँ मनुष्य शरीर में होती हैं, वे सभी क्रियाएँ पेड़-पौधों में पायी जाती हैं। हम श्वास में ऑक्सीजन लेते हैं और कार्बन डाईऑक्साईड छोड़ते हैं। वह गन्दी वायु वे लेते हैं और हमें ऑक्सीजन देते रहते हैं, इसलिए वे हमारे कितने हितैषी हैं। फल-फूल, लकड़ी, गोंद, रबर, जड़ी-बूटियाँ आदि के देनदार हैं। इन्हें हानि पहुँचाने से हमारा जीना दुर्भर हो जाएगा। प्रदूषण दूर कर वातावरण शुद्ध करते हैं। ये भी मरते हैं, बीमार पड़ते हैं। इनमें सन्तानोत्पत्ति होती है। एक बीज उगने पर अनेक पत्तियाँ निकाल कर विशाल वृक्ष का रूप धारण कर लेता है। ये वर्षा का पानी पीकर हँसते हैं। ये भयभीत भी होते हैं।''

आल्या-''मैंने उन्हें भयभीत होते नहीं देखा।''

सौम्या-''हर पौधा भयभीत होता है, परन्तु दिखाई नहीं देता, लेकिन छुई-मुई पौधा ऐसा होता है, हाथ लगाते ही मुर्झा जाता है। कुछ समय पश्चात् पुनः सही अवस्था में आ जाता है। पेड़ पानी पीते और खाद लेते हैं। श्वासोच्छ्वास भी करते हैं।''

आल्या– ''मेरी प्यारी सखी सौम्या! अब कितना लम्बा भाषण देगी, अब विराम लगा। मैं सब समझ गई हूँ।''

सौम्या– ''तू मेरा कहना मानेगी तो 'अनर्थ दण्ड' और 'ओघ संज्ञा' से बच जाएगी। अविवेक से होने वाली अनेक हिंसाओं से बच जाएगी।''

आल्या– ''ओघ-बोध संज्ञा क्या होती है?''

सौम्या– ''बोध संज्ञा नहीं होती है। ओघ संज्ञा होती है। बिना सोचे-विचारे धुन-धुन में किसी कार्य को करने की प्रवृत्ति को ओघ संज्ञा कहते हैं। बिना प्रयोजन के पाप काम को करना अनर्थदण्ड है। प्यारी सखी, एक आवश्यक बात तो रह ही गई। वह सुननी पड़ेगी। आज से 2,544 वर्षों पहले भगवान महावीर ने यह प्रमाणित कर दिया था कि वनस्पति सजीव है। अभी एक शताब्दी पहले जगदीशचन्द्र बसु ने भी इसी बात को प्रमाणित किया कि पेड़-पौधे सजीव हैं, इसलिए तुझे इस हिंसा से बचाना चाहती हूँ। तूने कुत्तों को पत्थर मारते समय अशुद्ध शब्द बोले थे। 'साला मर यहाँ से, नहीं तो जान से मार डालूँगी।' जान से मारना ही हिंसा नहीं है पर गाली-गलोच करना, कटु वचन बोल कर किसी का दिल दुखाना भी हिंसा है। हमें तो दूसरे के गुणों को ग्रहण करना चाहिए- उनके हितों का आभार मानना ही महान् विचार है।''

आल्या– ''तेरा पेट उपदेशों से भर गया, मुझे तो भूख लगी है, चल अन्दर नाश्ता करेंगे।''

जूठन

यश जूठा डाले बिना कभी खाना नहीं खाता था। उसकी यह आदत बन गई थी। भँवर प्रतिदिन उसके जूठन से ही पेट भरता था। भँवर अनाथ था। उसके माता-पिता का देहावसान होने के पश्चात् उसके चाचा ने वकील सुरेन्द्रसिंह के यहाँ दासवृत्ति करने के लिए छोड़ दिया था। भँवर यहाँ खुश था। झूठा भोजन पेट भर तो मिल जाता था और यश के साथ उसकी अच्छी बनती थी।

एक दिन वकील साहब अवकाश पर थे। यश का जूठ खाना भँवर को देते देख लिया।

वकील साहब ने, पत्नी नीता को कहा-"भँवर को जूठा भोजन मत देना।" नीता ने सुना-अनसुना कर दिया।

यश के ताऊजी के लड़के का विवाह था। उसने अपने मोहल्ले के मित्रों को स्वरुचि भोज पर निमन्त्रित किया। सभी मित्र भोजन के लिए आए। उसने उनका स्वागत किया और प्लेटें, चम्मच और प्यालियाँ उन्हें पकड़ाई। सभी मित्रों ने प्लेटों में खाना परोस लिया और स्वाद ले-लेकर मौज-मस्ती से खाने लगे, मित्रों के साथ खाने में आनन्दानुभूति हो रही थी। आपस में कह रहे थे कि सभी व्यञ्जन बहुत स्वादिष्ट बने हैं। पर यश ने देखते ही देखते तीन-चार प्लेट भरी की भरी जूठन में डाल दी।

नींव-"यश क्या कर रहा है? बार-बार प्लेटें बदल रहा है और सारे व्यञ्जन जूठे डाल दिए।"

यश-"नींव! मुझे तो कोई चीज़ रास नहीं आई।"

आरिश-"अरे यश! भोजन बहुत ही स्वादिष्ट है, व्यञ्जनों की संख्या भी बहुत है इसलिए एक प्लेट बहुत महँगी होगी।"

यश–''ताऊजी घर में बात कर रहे थे, कि एक प्लेट 800 रुपये की है।''

आरिश–''800 रुपये की एक प्लेट, तो व्यञ्जन पसन्द आता है वही ले, ताकि जूठा डालने की नौबत नहीं आए।''

दूसरे दिन बच्चे स्कूल जाने के लिए निकले। स्कूल गाँव से दूर था। बच्चे मिलकर स्कूल जाया करते थे। अप्रैल का महीना था। प्रात: ठण्डी-ठण्डी सुगन्धित बयार चल रही थी। नीम के फूल, मोगरा और सरेस के फूलों की लुभावनी बहार थी। बच्चों का मन टहलने का हुआ, लेकिन उन्हें समय पर स्कूल पहुँचना था, इसलिए वहाँ से चल दिए। आगे चलने पर वही स्थान आया जहाँ पर कल सामूहिक भोज था। प्रतिष्ठान के बाहर इतना जूठन का ढेर पड़ा था कि उससे दुर्गन्ध फैल गई। शुद्ध हवा दूषित हो गई, बच्चे नाक सिकोड़ने लगे। जूठन पर मक्खियाँ भिनभिना रही थीं, कौए काँव-काँव कर रहे थे, अन्य कौओं को बुला रहे थें। कुत्ते भी जूठन चाट रहे थे। प्लास्टिक की थैलियाँ उठाने वाले बालक जूठन को इधर-उधर कर मिठाई और पूरियों के टुकड़े निकाल-निकाल कर अपनी भूख शान्त कर रहे थे।

यश–''देखो, ये बच्चे कितने गन्दे हैं, कल की जूठन खा रहे हैं।''

नींव–''मैंने तुझ से कहा था कि इतना जूठा क्यों ड़ाल रहा है। यह मूल्यवान भोजन कचरे में परिवर्तित हो गया। बेचारे! निर्धन बच्चे सड़ा-बासी भोजन खा रहे हैं, क्योंकि इन्हें यथा समय भरपेट भोजन नहीं मिलता है। खाने की प्रतीक्षा करते-करते भूखे ही सो जाते हैं। हम इस भोजन का इतना अनादर करते हैं, खाने योग्य नहीं रहता है।''

यश–''मेरे जूठे से तो भँवर का पेट भर जाता है।''

आरिश–''क्यों जूठा ड़ालते हो? और दूसरों को खिलाते हो। जूठा डालना पाप है और दूसरों को खिलाना तो महापाप है। हमारी माँ-दादी सर्दी-गर्मी सहन कर बड़े तन-मन से, प्यार से खाना बनाती है। उस परिश्रम से बने भोजन को जूठा डालना उचित नहीं। दूसरी बात यह है कि रोगी व्यक्ति का जूठा भोजन अन्य प्राणी को खिलाएँगें तो वह भी रोगी हो जाएगा।

यश–''सुनो-सुनो! 21 अप्रेल को मेरा जन्म-दिवस है, बड़ी धूमधाम से मनाया जाएगा। तुम सभी को उस दिन सांय छह बजे मेरे घर आना है।''

यश के घर में जन्म-दिवस की तैयारियाँ प्रारम्भ हो गईं। उसके लिए नए कपड़े सिलवाए गए। हॉल की सजावट होने लगी। भँवर इस कार्य में इतना लिप्त हो गया कि स्वयं का भान ही नहीं रहा। गुब्बारे फुलाकर लगाना, कागज की रंग-बिरंगी फरियाँ बनाकर टाँगना, छोटे-छोटे बल्बों की रोशनी करना, गमलों को पंक्ति से सजाना आदि।

21 अप्रेल का दिन आ गया। यश और भँवर फूले न समा रहे थे। सांय छह बजे परिजन और मित्र एकत्रित हो गए। हॉल के बीचोंबीच लड्डुओं का थाल रखा गया। नीता ने यश को कुमकुम का टीका लगाया और पिताजी ने गुलाब के पुष्पों की माला पहनाई। मित्रों ने गुलाब की पंखुड़ियों की वर्षा की। नीता ने आरती की और लड्डू खिलाया। तालियाँ बजने लगीं और बधाई गायन शुरू हुआ।

"बधाई हो बधाई, जन्म-दिन की तुमको बधाई
जन्म-दिन तुम्हारा, लड्डू मिलेंगे हमको।"

यश ने सभी जनों को लड्डू बाँटे, लेकिन भँवर को भूल गया। भँवर सब लोगों के पीछे खड़ा था। लोगों की आड़ में उसे कुछ भी दिखाई नहीं दिया। केवल गायन की मीठी-मीठी ध्वनि सुनाई दे रही थी, फिर भी भँवर बहुत खुश था।

स्वरुचि भोज आरम्भ हुआ। नीता और वकील साहब अतिथियों के आतिथ्य में लगे हुए थे। यश मित्रों को खाना खिलाने में व्यस्त था। भँवर को खाना-खिलाना किसी को भी याद नहीं आया। घर व्यवस्थित कर के सभी सो गए। भँवर के पेट में चूहे कूदने लगे। भूखे को नींद नहीं आ रही थी। इधर-उधर करवटें बदल रहा था। पूरे दिन काम करके थक गया। थके को नींद जल्दी आनी चाहिए, लेकिन वह पूरे दिन का भूखा था। भूख से तड़प रहा था। वह उठा और उस ओर गया जहाँ पर लड्डुओं के डिब्बे पड़े थे। उसने एक डिब्बा खोला, डर के मारे हाथ काँप रहे थे। अभी लड्डू खाया भी नहीं और थर्राते हाथों से डिब्बे का ढक्कन धड़ाम से नीचे गिर गया। ढक्कन की आवाज़ सुनकर नीता भागती हुई भण्डार गृह में आई। मन में सोचा कि चूहा आया है, देखा तो भँवर खड़ा है। नीता को देखकर भँवर को कँपकँपी छूट गई। नीता ने सोचा न समझा इतने जोर से चाँटा मारा कि पाँचों अंगुलियाँ गाल पर छप गईं। चिल्लाने लगी, चोर कहीं का लड्डू खाने के लिए जीभ मचल रही है और मार-मार कर कहने लगी ले

और खा लड्डू। बच्चा जोर-जोर से रोने लगा। रोना सुनकर यश उठकर आया। भँवर रो मत, भँवर रो मत। समीप आकर पुचकारने लगा।

वकील साहब–''क्या हुआ नीता?''

नीता–''लड्डू चुराने आया है।''

वकील साहब–''क्यों भँवर?''

भँवर–''बाबूजी! मुझे भूख लगी थी। आज मम्मीजी ने मुझे जूठन दिया ही नहीं। यश भैया ने अपने मित्रों के साथ खाना-खा लिया, इसलिए जूठन हुआ ही नहीं।

वकील साहब करुणार्द्र हो गए, नीता से कहने लगे-''हाय नीता! भँवर चोर नहीं है। यह अपराधी नहीं है। अपराध-अन्याय हमने इसके साथ किया है। सभी परिवारजन और मित्र-मण्डली ने भोजन कर लिया। यह नन्हा, अबोध अनाथ भूखा रहा। उनका हृदय इतना पसीज गया कि रो पड़े। नीता तुमने इसके साथ अच्छा व्यवहार नहीं किया।''

नीता पश्चात्ताप की आग में जलने लगी। मैंने इस मासूम के साथ घोर अपराध कर डाला। दुबला-पतला, हँसमुख बालक, पूरे दिन मेरे काम में हाथ बँटाता है, अरे! यही भूखा रह गया। इसकी आत्मा मुझे कोसती होगी। हे भगवान!

नीता–''वकील साहब, मेरे दो बेटे हैं, भँवर-यश।''

यश–''पापा! मेरे मित्रों ने मुझे समझाया कि जूठा डालना पाप है, दूसरों को जूठा खिलाना अनैतिकता है। जन्म-दिवस पर संकल्प ले रहा हूँ कि जूठन नहीं डालूँगा और भँवर को भी शुद्ध भोजन खिलाऊँगा।

⊠⊠⊠

समाज की महत्ता

ग्रीष्म अवकाश चल रहा था। आरव छत पर खुली हवा में मोबाइल में खेल खेल रहा था। इतने में उसका मित्र श्लोक आता है।

श्लोक– 'यार, मैं जब भी आता हूँ, तुम मोबाइल से खेलते मिलते हो। यह मुझे अच्छा नहीं लगता है।'

आरव– 'तुझे अच्छा नहीं लगता है, पर मुझे तो बहुत ही पसन्द है।'

श्लोक– 'यह एक प्रकार का व्यसन है, हाथ में आ जाने के पश्चात् छूटता नहीं है। मोबाइल में खेलते समय कोई व्यक्ति आ जाए तो अखरने लगता है, क्योंकि मनोरञ्जन में बाधा पड़ जाती है। कोई हमसे कुछ पूछता है तो उसका उत्तर तुरन्त नहीं दे पाते हैं और एँ–एँ करते हैं जैसे भैंस के आगे बीन बजा रहे हैं।'

आरव– 'पढ़ने के पश्चात् क्या करूँ?'

श्लोक– 'मैं भी यही सोचता हूँ क्या करूँ। सोचते–सोचते मस्तिष्क में आया कि कोई सामाजिक कार्य करें। योग शिविर में प्रशिक्षण ले चुके हैं। मोहल्ले के किशोरों को इकट्ठा करके योग करें। उसमें अपनी रुचि भी है। सायं 5 बजे से 6 बजे तक का समय रखेंगे। आधा घण्टा योग और प्राणायाम करेंगे और आधा घण्टा अन्य खेल खेलेंगे। स्थान रूपल उद्यान रखेंगे। एक पञ्जिका में सबके नाम लिख लेंगे। मेरे पिताजी सामाजिक कार्य करते हैं। प्रतिदिन संध्या के समय अस्पताल जाकर रोगियों की सेवा करते हैं। उनके लिए दवाइयाँ, फल एवं अन्य आवश्यकताओं की पूर्ति करते हैं। कभी–कभी मैं भी जाता हूँ। कार्य प्रारम्भ करने के पहले पिताजी से सलाह ले लेते हैं, अन्य कार्य बताएँगे तो वह कर लेंगे।

श्लोक आरव को साथ लेकर घर आ जाता है।

आरव– 'नमस्कार चाचाजी!'

श्लोक के पिता विनयचन्दजी दोनों को आशीर्वाद देते हैं।

आरव– 'श्लोक मुझे मोबाइल पर खेल खेलने से मना करता है और कहता है व्यर्थ में समय गँवाता है, संघ से जुड़कर, काम करें।

विनयचन्द– 'समाज को समय देकर समय का सदुपयोग करो। समाज नव पीढ़ी पर आश्रित है।'

आरव– 'मैं किसी पर आश्रित नहीं हूँ। अपना काम स्वयं कर लेता हूँ। पढ़ाई में समस्या आती है तो मोबाइल से समस्या हल कर लेता हूँ। खाने-पीने की सामग्री ऑन लाइन मँगवा लेता हूँ। मैं तो अकेला ही अच्छा हूँ।'

विनयचन्द– 'तुम अकेले नहीं रह सकते हो। प्रत्यक्ष-अप्रत्यक्ष रूप से दूसरों पर निर्भर हो। मोबाइल द्वारा अपनी समस्या का समाधान कर लेना, ऑन लाइन सामान मँगवा लेना ठीक है। यह सब कार्य अपने आप तो नहीं हुए। ऑन लाइन घर बैठे सामान आना, यह प्रौद्योगिकी किसी न किसी की देन है। मोबाइल भी बुद्धिजीवियों की भेंट है। ये वैज्ञानिक भी सामाजिक प्राणी हैं।'

आरव– 'चाचाजी, ये लोग पैसा लेकर कार्य करते हैं।'

विनयचन्द– 'आरव, तुम बहुत भोले हो। पैसे देने के पश्चात् हमारा काम तो बन जाता है। सभी लोगों को अपनी जीविका चलाने के लिए पैसे चाहिए। मनुष्य काम भी नहीं करे और पैसा भी नहीं कमाएगा तो समाज पर भार बन जाएगा, बेरोजगारी बढ़ जाएगी। जो लोग अपने पूर्वजों का कार्य सम्भाल कर पैसा कमाते हैं वे कर्त्तव्यनिष्ठ हैं। तुम सब काम अकेले नहीं कर सकते हो जैसे कृषि करना, लुहार, सुनार, बढ़ई, धोबी आदि काम करने वालों की सहायता लेनी ही पड़ती है। विकसित और स्वस्थ समाज के लिए इञ्जीनियर, डॉक्टर, वकील, सी.ए., शिक्षक एवं वैज्ञानिक का समन्वय जरूरी है। समाज के सभी लोग अपनी भूमिका निभाते हैं। समाज के बिना मनुष्य अधूरा है। उसकी मान-मर्यादा समाज से होती है। समाज से उसका अस्तित्व जुड़ा हुआ है।

एक उदाहरण से इसका स्पष्टीकरण करता हूँ।

सिर में घने और काले-काले बाल से चेहरा खिलता है। इसलिए बालों की विशेष सुरक्षा की जाती है। उनको सँवारते हैं। एक भी बाल टूटने नहीं देते हैं। टूटने पर दु:ख होता है। उनकी रक्षा के लिए बड़े दाँतों का कंघा रखा जाता है। अधिक झड़ने पर चिकित्सा की जाती है। सफेद होने पर वे काले किए जाते हैं। नवयुवक-नवयुवतियाँ भिन्न-भिन्न प्रकार के केश-विन्यास करती हैं। जो बाल टूट जाते हैं तो घृणा के साथ उन्हें फेंक दिया जाता है। एक भी बाल खाने में आ जाता है तो ऊब होने लगती है। खाना छोड़कर उठ जाते हैं।

ऐसा क्यों? चेहरे की सुन्दरता बढ़ाने वाले ही तो बाल हैं। समूह में थे तब उनकी सुरक्षा थी, उनका मान था, इसी प्रकार व्यक्ति भी समाज का अंग बनकर रहता है तो उसका सम्मान है। हिलमिल कर रहने से सब हितैषी रहते हैं।

श्लोक– 'मैं आठवीं कक्षा में पढ़ रहा था। पापाजी गणित पढ़ा रहे थे। उसी दिन गणित की परीक्षा थी। इतने में फोन आया। पड़ोसी जगजीतसिंहजी का देहान्त हो गया। 10 बजे शव यात्रा का प्रस्थान होगा। पिताजी तुरन्त उठ गए। लोकाचार में जाने के लिए तैयार होने लगे।'

श्लोक ने कहा– 'मेरे गणित की परीक्षा है। आप जा रहे हैं।'

पिता– 'मुझे लोकाचार में जाना है।'

श्लोक– 'मुझे गणित कठिन लगती है, आप कल बैठक में चले जाना।'

पिता– 'बेटा! गणित के प्रश्न तुम स्वयं हल कर सकते हो। मैं जहाँ जा रहा हूँ, वहाँ सबको मिलकर काम करना होता है। जिनके घर में मृत्यु हुई है वे बहुत दु:खी हैं। उन्हें सान्त्वना देनी होती है। कफन लाना होता है। पार्थिव देह को अर्थी पर रखने हेतु तैयार करना होता है। अन्तिम संस्कार के लिए कन्धों पर उठाकर श्मशान घाट ले जाना होता है। सगे-सम्बन्धी अड़ोसी-पड़ोसी मिलकर अपना-अपना कर्त्तव्य निभाते हैं। यह कार्य श्रेष्ठ कार्यों में अपना स्थान रखता है। एक घटना सुनाता हूँ जिससे तुम्हें आभास होगा कि समाज का कितना महत्त्व है।

अपने ही नगर में अत्यधिक धनी सेठ रहते थे। वे लोकाचार में घोड़े पर बैठकर जाते थे, श्मशान के कार्य में हाथ नहीं बँटाते थे। उन्हें पैसे का बहुत घमण्ड था, सभी को छोटा मानते थे।

सेठजी की माताजी का देहान्त हो गया। परिचितों को सूचित किया गया। सभी लोग घोड़े पर बैठकर आ गए। उनके कार्य में किसी ने हाथ नहीं बँटाया। सेठजी राह देख रहे थे कि लोग अन्दर आकर रीति-रिवाज़ पूरे करें, समय पर यहाँ से अर्थी रवाना हो जाए। तीन-चार घण्टे बीत गए अर्थी बाहर नहीं आई। एक व्यक्ति अन्दर जाकर कहने लगा-''सेठजी जल्दी कीजिए सभी लोग बाहर राह देख रहे हैं। काले-काले बादल भी गरज रहे हैं, वर्षा आने की सम्भावना बढ़ रही है।''

सेठजी-'आप लोग अन्दर पधारिए और क्रियाकर्म कीजिए। बहुत कहने के पश्चात् भी लोग टस से मस नहीं हुए। अन्त में सेठजी को अपनी गलती का भान होने लगा। मन ही मन चिन्तन करने लगे कि मैं कभी किसी के काम नहीं आया, इसलिए मेरे साथ ऐसा ही व्यवहार हो रहा है।'

सेठजी का अहंकार भंग हो गया। वे अपनी पगड़ी समाज के लोगों के चरणों में रखकर सबके गले मिले।

सेठजी जैसे ही नम्र हुए, लोगों ने घोड़ों को रवाना कर दिया। कुछे देर के बाद अर्थी बाहर आ गई।

विनयचन्दजी-'श्लोक-आरव आप समझ गए होंगे कि समाज से जुड़कर रहने से ही सफल जीवन व्यतीत कर सकते हैं।'

आरव-'चाचाजी, मैं संघ सहायक बनकर समाज के लिए भलाई के काम करूँगा।'

श्लोक-'मेरी तो यही सोच है कि मैं समाज के हित में भागीदार बनूँ।'

आदर्श प्रधानाध्यापक

एक विद्यालय में मदनलालजी शर्मा नैतिक शिक्षा का कालांश ले रहे थे। उसमें एक पाठ आया 'आदर्श प्रधानाध्यापक।'

मनीष खड़ा होकर बोला–समाचार पत्र में पढ़ा कि 'राजकीय प्राथमिक विद्यालय मजल' के प्रधानाध्यापक को गाँव ने पीटा, क्योंकि वे उपस्थिति पंजिका में अपनी उपस्थिति लगाकर अपने गाँव चले जाते थे। अन्य अध्यापकों को भी बारी-बारी से उपस्थिति लगवाकर छुट्टी दे देते थे। विद्यालय का अनुशासन और व्यवस्था चौपट होने लगी। एक कहावत भी है–धणिया बिना ढोर सूना। बच्चे उपद्रव मचाते तो उन्हें कोई मना करने वाला नहीं होता था। पढ़ने वाले बच्चों को यह बात बहुत खटकने लगी। उन्होंने अपने अभिभावकों के पास जाकर शिकायत की, तब गाँव वालों ने प्रधानाध्यापक को समझाया, लेकिन उन्होंने सुनी-अनसुनी कर दी। उनके पीछे लम्बे हाथ थे। अन्त में गाँव वालों ने तंग आकर प्रधानाध्यापक को घेर लिया और उन्हें जमकर पीटा।

शर्माजी ने कहा–सुनो बच्चों! वे प्रधानाध्यापक जी कर्त्तव्य विमूढ़ हो गए थे। उसका कुपरिणाम उन्हें मिल गया। आप लोग ऐसी धारणा न बनाएँ। प्रधानाध्यापक बहुत पढ़े-लिखे और अनुभवी होते हैं। उनमें नेतृत्व करने के गुण होते हैं। तुम्हें अध्यापकों के प्रति श्रद्धा भाव रखना चाहिए। उन पर विश्वास करना चाहिए। उनका मान-सम्मान करना चाहिए। वे हमेशा बालकों का हित चाहते हैं। मैं आपको एक आदर्श प्रधानाध्यापक की निष्ठा, मानवता और ईमानदारी की कहानी सुना रहा हूँ।

राजस्थान के एक छोटे से शहर की राजकीय सैकेण्डरी स्कूल के प्रधानाध्यापक

तिलोकरामजी भोनोत थे। उनको स्कूल में क्वार्टर मिला हुआ था। वे परिवार सहित उसी में निवास करते थे। स्कूल समय 10.30 का होता था। वे 10 बजे स्कूल पहुँच जाते थे। स्कूल की, पानी की और शौचालय की सफाई देखा करते थे। प्रधानाध्यापक अल्प भाषी और मृदु भाषी थे। प्रार्थना में वे स्वयं खड़े रहते थे। कोई भी छात्र इधर-उधर नहीं देखता था। उनका रौबिला व्यक्तित्व था। कक्षाएँ सुव्यवस्थित चलती थीं। कोई अध्यापक अनुपस्थित होते तो उनकी कक्षा स्वयं ले लेते थे। गणित में विशेष योग्यता थी, इसलिए गणित पढ़ाया करते थे।

प्रधानाध्यापक कार्यालय में कार्य कर रहे थे। इतने में उनकी पुत्री आयी। पापा! चूल्हा जलाने के लिए लकड़ियाँ नहीं हैं आप जल्दी से मँगवा दीजिए तब खाना बनेगा। प्रधानाध्यापक ने नत्थू चपरासी को घण्टी बजाकर के बुलाया और कहा-'नत्थू! खाना बनाने की लकड़िया लानी है स्कूल छूटते ही ले आना।' स्कूल छूटते ही नत्थू ने स्कूल के खेत से लकड़ियाँ लाकर घर पहुँचा दी। प्रधानाध्यापक की पत्नी शीला खाना बनाने लग गई। कुछ समय पश्चात् प्रधानाध्यापक घर पहुँचे और नत्थू को आवाज़ लगाई। नत्थू आ गया। नत्थू कितने रुपयों की लकड़िया आई है और तेरी मज़दूरी ले ले। साहबजी! लकड़ियाँ तो स्कूल के खेत से लाया हूँ। ये रुपये लीजिए और मेरी मज़दूरी नहीं बनती है। प्रधानाध्यापक कुर्सी से उठे आव देखा न ताव, जलती लकड़ी चूल्हे से निकाल कर फेंक दी और कहा-'नत्थू तू ने यह क्या किया?'

नत्थू-'साहबजी! क्या हुआ?'

प्रधानाध्यापक-'अरे नत्थू! यह खेत सरकारी है। इसकी लकड़ियाँ तो बेचकर पैसे स्कूल के खाते में जमा होंगे। सरकारी लकड़ियों से बना खाना खाऊँगा तो मेरा सत्यानाश हो जाएगा। लकड़ियाँ वापस खेत में डालकर आ।' कल मेहमान आएँगे। घर में छह कप-प्लेट की आवश्यकता पड़ेगी, बाजार से ले आना। नत्थू ने सोचा एक दिन के लिए साहबजी व्यर्थ में खर्च कर रहे हैं। स्कूल में टी-सेट पड़ा धोकर ले आऊँगा और वापस धोकर रख दूँगा। वह स्कूल गया और टी-सेट लेकर आ गया। मास्टरजी ने कहा-'नत्थू! टी-सेट क्यों लाया, मुझे तो केवल कप-प्लेट चाहिए।'

नत्थू-'यह तो स्कूल का है। काम आने के बाद धोकर रख दूँगा।'

अरे भाई नत्थू! मुझे स्कूल की वस्तुएँ घर के लिए काम नहीं लेनी है। तू जा,

अभी के अभी रखकर आ और बाजार से लेकर आ।

नत्थू–'साहबजी! पूर्व प्रधानाध्यापक सुन्दर-सुन्दर वस्तुएँ घर ले जाते थे, काम लेकर वापस ले आते थे। आप भी काम ले लो।

प्रधानाध्यापक–'नत्थू! तू, जा पहले टी-सेट रखकर आ तब मुझे चैन मिलेगा।' बाजार से कप-प्लेट खरीद कर ला दे।

प्रधानाध्यापक नत्थू से काम करवाते थे। उसको चाय-पानी के पैसे देते थे। कभी-कभी अपने घर खाना भी खिलाते थे। वे दयालु और सज्जन पुरुष थे।

प्रधानाध्यापक स्कूल समय में कक्षाएँ लेते थे। स्कूल छूटने के पश्चात् अपना कर्मठ और विश्वसनीय बाबू को रोककर दोनों मिलकर लेखा-जोखा का काम पूरा करते थे। आवश्यक डाक आदि निकालकर ही बाबूजी को छुट्टी देते थे। उनकी आदत थी कि आज का काम आज हो जाना चाहिए। बाबू के जाने के पश्चात् स्वयं कुर्सी लगाकर बरामदे में बैठ जाते थे। कुछ समय बाद नत्थू को आवाज़ लगाते। नत्थू का घर स्कूल में ही था। नत्थू को कहते घड़ी में समय देखकर आ। अब तो बाबूजी घर पहुँच गए होंगे?

नत्थू–'आधा घण्टा हो गया है अब तो बाबूजी खाना खाने लग गए होंगे।'

प्रधानाध्यापक–पाँच मिनट और रुक जाता हूँ। इतने में घर से बच्चे आते हैं, पापा घर चलो। हमें भूख लगी है। सब मास्टरजी चले गए। प्रधानाध्यापक घर आते ही उनकी पत्नी शीला कहती है-'आप हमेशा घर देर से आते हैं स्कूल का समय कब का ही समाप्त हो गया है।'

प्रधानाध्यापक–'शीला! मैं बाबूजी का अतिरिक्त समय लेकर उनसे काम करवाता हूँ। वे कभी काम से मुँह नहीं मोड़ते हैं, चूँ तक नहीं करते हैं, ऐसे शिष्ट व्यक्ति से पहले मैं खाना नहीं खा सकता। यदि खा लिया तो मेरा जैसा स्वार्थी दुनिया में कोई नहीं होगा।'

अध्यापक मदनलाल शर्मा बच्चों को सम्बोधित करते हुए-'प्रधानाध्यापक कर्मनिष्ठ व्यक्ति थे। दूसरे के समय और कार्य की क़दर करते थे। उनकी आत्मीयता जगी रहती थी। वे व्यवहार कुशल थे।'

दिसम्बर से फरवरी तक सर्दी अधिक पड़ती है। ठण्डी हवाएँ चलती है। रज़ाई से

बाहर निकलना और हिटर से दूर होने का मन नहीं होता है, लेकिन वे सवेरे साढ़े छः बजे से साढ़े सात बजे तक गणित एवं अंग्रेजी की अतिरिक्त कक्षा लेते थे। उनको देखकर अन्य अध्यापक भी अपने विषय की कक्षा लेने लगे। स्कूल का वातावरण एकदम शान्त और रमणीक था। बच्चों के पढ़ाई का स्तर बढ़ने लगा। पढ़ाई के साथ खेल को भी उतना ही महत्त्व देते थे। स्कूल का मैदान बहुत बड़ा था। तरह-तरह के कोर्ट बने हुए थे। सब सुविधाएँ उपलब्ध थीं। सेवकों, बच्चों से श्रमदान करवा कर मैदान की सफ़ाई करवा लेते थे। स्वयं भी बराबर काम करते थे। किसानों के बच्चों से खेती-बाड़ी का काम करवा लेते थे। अन्य बच्चों से फलों के पेड़ और फूलों के पौधे लगवाते थे। नीम और पीपल के पेड़ खूब लगवाए जिससे शुद्ध हवा और छाया मिले। यह सब कार्य बच्चे तन, मन, और सहज भाव से कर लेते थे। पन्द्रह अगस्त और छब्बीस जनवरी को विद्यालय में लगे फल बच्चों में बाँट दिया करते थे। बच्चे बड़े प्रसन्न रहते थे। खेत का अनाज बाजार में बिकवा देते थे। उस राशि का लेखा-जोखा रखने के लिए बाबूजी को रख दिया। सारे कार्य की देख-रेख स्वयं करते थे। जब बहुत राशि इकट्ठी हो गई तब शिक्षा विभाग कार्यालय से अनुमति लेकर स्कूल में नए कक्ष बनवा लिए।

स्टेशनरी विक्रेता अपनी स्टेशनरी बेचने आते उनसे कोटेशन लेते थे। जिसकी सामग्री अच्छी और सस्ती होती थी उससे खरीद लेते थे।

स्टेशनर प्रधानाध्यापक को कहते दस प्रतिशत का लाभ आपको दिया जाएगा।

प्रधानाध्यापक स्टेशनर से कहते मुझे प्रलोभी न बनाएँ। दस प्रतिशत का लाभ विद्यालय को दीजिए।

प्रधानाध्यापक के जीवन में आदर्श झलकता था, उच्च विचारों के धनी थे। उन्हें सुपथ से कोई डिगा नहीं सकता था। ईमानादारी और नैतिकता कूट-कूट कर भरी हुई थी।

दसवीं के छात्रों के विदाई समारोह में सांस्कृतिक कार्यक्रम रखते थे। बच्चों के अभिभावकों को बुलाया जाता था। कार्यक्रम की तैयारी में बाहर से किसी भी प्रकार के कलाकारों को नहीं बुलाया जाता था। छात्रों और अध्यापकों की योग्यता से ही तैयारी की जाती थी। यदि बाहरी कलाकार निःशुल्क सेवा देना चाहता था तो वह

मान्य थी। राज के पैसों का अपव्यय नहीं करते थे।

दसवीं कक्षा का परीक्षा परिणाम घोषित हुआ। कक्षा में साठ विद्यार्थी थे जिनमें से दस छात्र मेरिट सूची में आये, चालीस विद्यार्थी प्रथम श्रेणी से उत्तीर्ण हुए और शेष दस विद्यार्थी द्वितीय श्रेणी से उत्तीर्ण हुए। परीक्षा परिणाम उच्च स्तर का देखकर छात्र और अभिभावकों ने प्रधानाध्यापक और अन्य अध्यापकों को ऊपर उठा लिया और जय-जय की ध्वनि गूँज उठी थी।

उत्तीर्ण छात्रों ने संगोष्ठी रखी। उसमें तय हुआ कि प्रधानाध्यापक जी किसी भी प्रकार की भेंट स्वीकार नहीं करेंगे इसलिए रुपये की माला पहनायी जाए। दूसरे दिन प्रार्थना होने के पश्चात् प्रधानाध्यापक जी को रुपये की माला पहनायी गई और तालियों की ध्वनि चारों दिशाओं में फैल गई। उन्हें स्वर्ण अक्षरों में लिखा मान-पत्र अर्पण किया गया।

प्रधानाध्यापक ने उद्‌बोधन दिया-प्यारे बच्चों! मैं आपको धन्यवाद देता हूँ। दसवीं कक्षा का उच्च स्तरीय परिणाम आपका अथक परिश्रम एवं लग्न है। आपने विद्यालय की गरिमा बढ़ाई है। आगे के लिए भी ऐसी आकांक्षा रखता हूँ। आपके उज्ज्वल भविष्य की कामना करता हूँ।

कुछ समय पश्चात् लेखा लिपिक को बुलाया गया। उन्हें आदेश दिया कि आप नई पञ्जिका ड़ालकर माला वाले रुपये जमा कीजिए। इन रुपयों का ट्रस्ट खोला जाएगा। ट्रस्टी बनाए जाएँगे। वे इसका लेखा-जोखा रखेंगे।

इतने में डाकिया डाक लेकर आया। लिफाफा खोला गया।

श्रीमान् तिलकराम भानोत प्रधानाध्यापक राजकीय सेकेण्डरी विद्यालय को जिला शिक्षा अधिकारी बीकानेर के पद पर नियुक्त किया गया। अत: तुरन्त अपना कार्य सम्भाले। बच्चे स्थानान्तर सुनकर दु:खी हुए सभी भावुक हो गए। अध्यापकों ने समझाया। हमें गर्व होना चाहिए कि ऐसे सत्पुरुष संसार में बिरले ही होते हैं। आपश्री मानव ही नहीं महामानव है। ये तो पदोन्नति पर जा रहे हैं।

मदनलाल शर्मा द्वारा सुनाई गई इस कहानी को सुनकर बच्चे गद्‌गद् हो गए।

पत्थर की मनोकामना

रिमझिम वर्षा हो रही थी। ठण्डी-ठण्डी हवा मिट्टी की सौंधी-सौंधी सुगन्ध लेकर चल रही थी। छप्पर लगे हुए चबूतरे के नीचे मित्र-मण्डली ताश खेल रही थी हा-हुल्लड़ करके खेल का आनन्द उठा रही थी। वहाँ भिखारी आया, वह कहने लगा-''कुछ दे दे बाबू! तुम्हारा भला होगा। बारिश के कारण भिक्षा नहीं मिली। मैं भूखा हूँ।'' बूढ़े भिखारी पर दया आ गई। मित्रों ने मिलकर पैसे इकट्ठे किये। उनमें से कुछ ने कुछ नहीं दिया। सब मिलकर कहने लगे-''तू तो सबसे धनवान है कुछ तो दे, भूखे की आशीष मिलेगी।'' उसने अनाकानी की और अन्त में कुछ नहीं दिया।

एक मित्र बोला-''तू पत्थर दिल है रे!'' पास में बड़े पत्थर ने यह बात सुन ली। उसने अपने बेटे चूना से कहा-''चबूतरे पर बैठे लोगों ने उस कञ्जूस व्यक्ति को पत्थर कहा है। क्यों रे! मैं कञ्जूस और कठोर हूँ। हाँ मेरी काया कठोर है, लेकिन दिल तो मेरा बहुत कोमल और उदार है। मैं तो देता ही नहीं हूँ छप्पर फाड़ कर देता हूँ, जितना चाहिए ले लीजिए। मैं अपने को विक्रय नहीं करता हूँ। क्रय-विक्रय सेठ लोग करते हैं। मुझे खानों में बारूद द्वारा तोड़कर मेरे बड़े-बड़े टुकड़े करते हैं, तत्पश्चात् आवश्यकतानुसार आकर देते हैं। टाँकी मार-मारकर टाँचकर सुन्दर बनाते हैं। पट्टियाँ (छीणे) से छत बनती है, खण्डों से दीवारें बनती हैं। बड़े भवन और घर तैयार होते हैं। मनोरञ्जन के लिए दर्शनीय स्थान बनाए जाते हैं। आटा पीसने की चक्की में मुझे लगाया जाता है। मेरे द्वारा ही आटा पीसा जाता है, उससे रोटी बनाकर खाते हैं जिससे मानव अपनी भूख मिटाता है। मेरे वक्षस्थल पर रेल-गाड़ियाँ, हवाई जहाज, कारें बसें एवं अन्य वाहन चलते हैं। मैं देश-विदेश में जाता हूँ और सबसे मिलकर रहता हूँ। समभाव रखता हूँ। रंग-भेद, जाति-भेद और धर्म-भेद आदि का झंझट नहीं रखता हूँ। धनी-निर्धन का भी अन्तर नहीं है, फिर भी मुझे कठोर दिल की संज्ञा दी गई है।

मैं तो वसुधैव-कुटुम्बकम् की भावना रखता हूँ। मानव बुद्धि जीवी है। कुछ को छोड़कर बाकी सब अपने स्वार्थ में लिप्त हैं। उन्हें लोगों की चिन्ता नहीं है। बड़े-बड़े भवनों में रहते हैं जबकि उनका निवास आधे से कम भवन में हो सकता है। विपन्नों को रहने के लिए कहीं पर स्थान नहीं मिलता है। वे बेचारे गन्दे नालों के किनारे पॉलीथिन के बोरे, पुराने कपड़े बाँधकर उसके नीचे वर्षा, सर्दी, गर्मी आदि की रात्रियाँ बड़ी कठिनाइयों से व्यतीत करते हैं। गन्दगी, मच्छरों की बहुलता के कारण अस्वस्थता का राज्य रहता है।

मील एवं फैक्ट्रियों के स्वामी श्रमिकों के श्रम से कमाते हैं, लेकिन उन्हें पूरा पारिश्रमिक नहीं देते हैं इसीलिए उनकी जीविका चलाना दूभर हो जाता है। उनके बच्चे पढ़ने की आयु में सवेरे-सवेरे गुब्बारे फुलाकर बेचते हैं। कुछ बालक कचरे के ढेर से कचरा इकट्ठा करते हैं, कुछ जूतों की पॉलिश करते हैं। लज्जा की बात तो यह है कि कुछ भीख माँगने वाले बन जाते हैं, बड़ी दर्दभरी आवाज़ में माँगते हैं-''माई भगवान के नाम पर कुछ दे-दे, राम तेरा भला करेगा।'' यह सुनकर हृदय दहल जाता है, मन कचोटने लग जाता है, पर 'क्या करूँ मैं तो पत्थर हूँ।'

धनवान लोग ठाट-बाट बघारने के लिए होटलों में लाखों रुपये खर्च कर देते हैं। विवाहों में साज-सजावट में, भोजन में अनेक तरह के व्यञ्जन बनाकर अत्यधिक खर्च कर लेते हैं। कुछ विचार आता है कि व्यर्थ का व्यय नहीं करके निर्धनों के लिए निवास-स्थान बनाकर, निर्धन बालक-बालिकाओं के पढ़ने की व्यवस्था कर एवं अन्य सुविधा देकर उनकी सहायता करें।

अतिवर्षा होने पर झुग्गी-झोंपड़ियाँ ही बहती हैं। पेट पर पाती बाँधकर आवश्यक सामान बसाते हैं वह भी बह जाता है, वे बिल्कुल बेसहारा हो जाते हैं। ऐसे लोगों की आर्थिक आवश्यकताएँ पूरी कर मनुष्य जीवन सार्थक बनाएँ-

चिड़ी चोंच भर ले गई
नदी न घटियो नीर।

पत्थर ने कहा-

दान कर भला कर, दिल हल्का हो जाय।
परिग्रह कम हुआ, पुनीत काम हो जाए।।

पत्थर कहता है–'समर्थ हलवा पूरी खाए असमर्थ रोटी को तरसे।' आप महलों में सोएँ, निर्धन सड़कों पर सोएँ। यह बात मैं पसन्द नहीं करता हूँ। मेरे गले नहीं उतरती है। आपको प्रकृति देती है और आप लूँ-लूँ करते हैं, लीजिए अवश्य लीजिए फिर दूँ-दूँ बनिए, यानी दानी बनिए। बच्चे, युवा और बूढ़े सभी ऐसी प्रवृत्ति बनाएँ। हृदय कोमल होते ही आपका जीवन सीधा-सादा बन जाएगा। सादे होते ही अपरिग्रही बन जाएँगे, अपरिग्रही बनते ही अहिंसा तत्त्व पनपने लगेगा। जिससे 'कर' चोरी एवं अनेक अनैतिक आचरणों से मुक्त हो पाएँगे, कुव्यसन छूट जाएँगे।

क्षमा

उत्तमराज ने उदितराज को कहा–''पिताजी का स्वर्गवास अचानक हो गया, इसलिए वे सम्पत्ति का बँटवारा नहीं कर सके। हम स्वयं कर लेते हैं।''

बड़ा भाई चालाक था। उसने उदितराज से कहा–''बड़ा घर मैं रखूँगा, क्योंकि बड़ा घर बड़ा बेटा लेता है, तुम्हें छोटा वाला घर दिया जा रहा है। मेरा बेटा रघु सबसे बड़ा है इसलिए उसकी शादी पहले होगी तो बहू को आभूषण देने होंगे, आभूषण मैं रख लेता हूँ।''

उदितराज ने कहा–''चार खेत हैं। दो आप रख लो और दो मुझे दे दो।''

उत्तमराज–''खेत तो चारों ही मेरे नाम कर लिये हैं।''

उदितराज–''भैया! आप मुझे खेत नहीं देंगे तो मेरी जीविका कैसे चलेगी, मेरी कमाई का साधन तो खेत ही हैं।''

उत्तमराज–''मैंने कमाई कर सभी राशि पिताजी को दी, इसलिए खेत पर मेरा ही अधिकार है।''

उदितराज–''पिताजी की सम्पत्ति पर बेटों का बराबर हक होता है।''

उत्तमराज–''तू कुछ भी कह, मैं तुझे एक भी खेत नहीं दूँगा।''

खाना बनाने के लिए बर्तन और खाने का सामान देकर निकाल दिया।

उदित दु:खी होकर निकल गया। एक सेठ के यहाँ नौकरी कर ली, लेकिन घर चलाना कठिन हो गया। उसकी पत्नी भी दूसरों के खेत में मज़दूरी करने लगी।

उदितराज के जिस दिन अवकाश होता उस दिन उसकी लड़की सुनु और लड़का मुनु कहते–''पापा! ताऊजी के यहाँ चलो, हम रघु भैया, गोपाल भैया के साथ

खेलेंगे।'' उदितराज बच्चों की बात को टालता रहा। अन्त में एक दिन बच्चे पीछे पड़ गए, आज तो चलना ही पड़ेगा। तीनों ताऊजी के यहाँ पहुँच गए। प्रफुल्लित होकर कहा–ताऊजी द्वार खोलो, सुनु–मुनु आए हैं। दरवाज़ा नहीं खुला तो ज़ोर–ज़ोर से थपथपाने लगे और बोलने लगे, ताऊजी ज़ल्दी खोलो न हमें रघु भैया–गोपाल भैया से मिलना है, हम खेलेंगे।

ताऊजी–''चले जाओ, क्यों आए हो, भाग जाओ यहाँ से। तुम्हारे लिए कोई स्थान नहीं है यहाँ।''

बच्चे दु:खी होकर, मुँह लटकाए घर आ गए। जब रघु–गोपाल को पता चला कि सुनु–मुनु आए थे और पापा ने अन्दर नहीं आने दिया तो वे खूब रोए। उनका मन अन्दर से कटने लगा।

चारों बच्चे एक ही स्कूल में पढ़ते थे। अर्द्ध–विश्राम में चारों साथ खाना खाते थे, पश्चात् साथ खेलते थे, लेकिन घर आकर घर वालों को यह बात नहीं बताते थे, क्योंकि रघु–गोपाल समझते थे कि यदि घर में यह बात बता दी तो हमारा मिलना–जुलना बन्द हो जाएगा।

स्वतन्त्रता–दिवस के उपलक्ष्य में स्कूल में खेलकूद प्रतियोगिता रखी गई थी। मुनु बैडमिंटन में विजयी रहा। रघु, गोपाल और सुनु ने खूब तालियाँ बजाई।

रघु–गोपाल ने अपने पापा से कहा–''मुनु बैडमिंटन में विजयी रहा।''

उत्तमराज–''उनकी बातें मेरे सामने नहीं करना। मैंने तो उन्हें घर दे दिया, यह मेरी भलमानसी है, नहीं तो सड़क पर पड़े रहते।''

उत्तमराज की पत्नी **मीना ने कहा**–''घर देकर कृतज्ञता जताते हो। यह घर तो बाबूजी ने बनवाया था। खेत नहीं दिया, उसकी जीविका छीन ली। बहुत दुर्व्यवहार किया है। मैं तो कहती हूँ कि आपने छोटे भाई का शोषण किया है। बड़प्पन तो तब होता कि छोटे भाई को ज़्यादा हिस्सा देते।''

उत्तमराज–''मैंने जो किया वह बच्चों के लिए किया है। वे आराम का जीवन बितायेंगे। ज़्यादा बड़बड़ मत कर।''

मीना– पूत सपूत तो क्यों, धन संचै। पूत कपूत तो क्यों, धन संचै।

अनीति कर हम अच्छा जीवन नहीं बिता सकते हैं। इतने में पड़ोस से एक बच्चा आया।

बच्चा–''आण्टी रघु-गोपाल कहाँ हैं? हम खेलेंगे। स्कूल में वे मेरे साथ नहीं खेलते हैं और खाना भी मेरे साथ नहीं खाते हैं, वे चारों साथ बैठकर खाते हैं।'' यह बात उत्तमराज ने सुन ली।

उत्तमराज–''मीना! दोनों बच्चों को दूसरी स्कूल में प्रवेश दिला दूँगा। ताकि वे परस्पर मिले नहीं।''

मीना–''रघु, गोपाल का प्रवेश दूसरी स्कूल में नहीं करवाना है। यहाँ पढ़ाई अच्छी है चारों बच्चे प्रेम से रहते हैं।''

उत्तमराज ने दूसरे दिन एक दूर की स्कूल में प्रवेश करवा दिया।

रघु–गोपाल ने अपने पापा से कहा–''दूसरी स्कूल में हमारा मन नहीं लगेगा। हमारे सारे मित्र छूट जायेंगे।''

उत्तमराज को अहं बहुत था, वे दूसरों की बात नहीं सुनते थे। बच्चे दूसरी स्कूल जाने लगे। वहाँ उनका मन नहीं लगता था। वे सुनु-मुनु की याद में तड़फ़ने लगे। दुपहरी भी नहीं करते थे। भरा का भरा टिफिन वापस ले आते थे। मीना के पूछने पर यह उत्तर मिलता कि हमें भूख नहीं लगती है। घर में खाना कम ही खाते थे। दोनों चिन्ताग्रस्त हो गए। रघु को भाइयों के बिछुड़ने का इतना आघात पहुँचा कि स्कूल में चक्कर आया और गिर गया। गिरने से सिर में चोट आ गई, अचेत हो गया और 104 डिग्री ज्वर चढ़ गया। प्रधानाचार्य ने रघु के पिता को फोन किया कि रघु बेहोश है और इसे तेज़ ज्वर आ गया है।

उत्तमराज चिन्तित अवस्था में स्कूल पहुँचा और दोनों बच्चों को घर ले आया। रास्ते में उसे थोड़ी-थोड़ी चेतना आने लगी। डॉक्टर को बुलाया गया। डॉक्टर ने औषधियाँ दी। औषधि से ज़्वर नहीं उतरा। स्वास्थ्य और अधिक बिगड़ने लगा। चार-पाँच दिन हो गए आँखें बिल्कुल बन्द कर लीं। खाना-पीना छोड़ दिया। उसकी ऐसी अवस्था देख उसके माता-पिता की जान सूख रही थी।

उत्तमराज–''रघु बेटा! आँखें खोलो तुम्हारी मम्मा मौसमी रस निकाल कर लाई है, तुम जल्दी पी लो तबीयत ठीक हो जाएगी।''

रघु में बोलने की शक्ति नहीं थी, फिर भी पिता से कहा–''पापा! मैं मुनु-सुनु के साथ पीऊँगा और उनकी आवाज़ सुनकर आँखें खोलूँगा।''

उसके पिता से उसकी पीड़ा सहन नहीं हुई। उसने अपनी पत्नी मीना को अपने भाई के परिवार को बुलाने भेजा। मीना ने अपने देवर का द्वार खटखटाया। देवरानी ने

द्वार खोला और मीना के चरण स्पर्श किए और कहा–''आइए बैठिए!'' मीना देवरानी के गले लगकर रोने लगी।

देवरानी–''भाभी! सब ठीक तो है न, आप क्यों रो रही हो?''

मीना–''रघु की दशा गम्भीर हो रही है। 104 डिग्री ज़्वर आ रहा है, नीचे नहीं उतर रहा। जब से ज़्वर चढ़ा है तब से पानी के अलावा कुछ भी खाना-पीना नहीं कर रहा है। चार दिन से आँखें भी नहीं खोल रहा है। एक रट लगा रखी है। मुनु-सुनु, चाचा-चाची, उसने अपने पिता से स्पष्ट कह दिया कि मुनु-सुनु के आने पर ही आँखें खोलूँगा। मुझे अनुभव है मेरे पति का व्यवहार तुम्हारे प्रति अच्छा नहीं है। मैं आँचल फैलाकर तुमसे वहाँ चलने की भिक्षा माँग रही हूँ।''

देवरानी–''भाभी जी! रघु मेरा प्रिय बेटा है, उसके लिए मैं कितना ही तिरस्कार सहन कर सकती हूँ।''

इतने में बच्चे आए और ताई की गोद में बैठ गए। बच्चों को बहुत सुकून मिला। ताई को स्वर्गीय आनन्द आया और उनकी पूरी देह पर हाथ फेर-फेर कर निहारा।

मुनु-सुनु ने ताई से पूछा–''रघु भैया और गोपाल भैया कैसे हैं?''

मीना–''बेटा! रघु का स्वास्थ्य ठीक नहीं है वह तुम्हें बुला रहा है।''

मुनु–''ताईजी! हम कैसे चलें? ताऊजी हमें घर में घुसने भी नहीं देंगे। कुछ दिन पहले हम आए थे, ताऊजी ने द्वार नहीं खोला। हमने दरवाज़ा खूब खटखटाया, पर वे मिले तक नहीं, हम निराश होकर घर चले आए।''

मीना–''मैं तुम्हें लेने आई हूँ। तुम चलोगे तब वह आँखें खोलेगा। जल्दी करो। देर न करो रघु बहुत पीड़ा में हैं।''

ताई मीना के साथ चारों परिजन जाते हैं। ताऊजी राह देख रहे थे। एक क्षण एक वर्ष की तरह लग रहा था और सोच रहा था-मैंने मासूम बच्चों के साथ तुच्छ से तुच्छ व्यवहार किया है।

उत्तमराज का घर आ गया। मीना ने दरवाज़ा खुलवाया। द्वार खुलते ही बच्चे ताऊजी के गले लिपट गए।

मुनु-सुनु–''ताऊजी हमको आपकी याद आती है। रघु भैया-गोपाल भैया बिना हमारा मन नहीं लगता है। पहले तो हम स्कूल में मिल लेते थे। हम साथ बैठकर खाना खाते थे। वे अपनी घी की पूरियाँ हमें खिलाते थे और हमारी रूखी रोटी स्वयं

खाते थे। बच्चे रो पड़े। अब तो आपने उनका स्कूल ही बदला दिया।''

ताऊ उत्तमराज– ''बेटा! पहले रघु के पास चलते हैं फिर बातें करेंगे।''

उत्तमराज, उदितराज उसकी पत्नी, मुनु-सुनु रघु के समीप जाते हैं। मुनु-सुनु- रघु भैया! हम आ गए हैं। रघु ने भाइयों की आवाज़ सुनते ही आँखें खोल ली। चार दिन का भूखा-प्यास और अत्यधिक ज्वर से मुरझा हुआ लेकिन भाइयों को देखते ही रघु का चेहरा फूल की तरह खिल गया।

रघु– ''मुनु-सुनु तुम मुझे पहले मौसमी का रस पिला दो; मुझे बहुत भूख लगी है।''

आठों जने रघु के पास बैठे हैं। वात्सल्य और प्रेमभरा दृश्य देखकर सभी आश्चर्यचकित हो गए। आँखों से प्यार और खुशी भरे आँसू लुढ़कने लगे।

उत्तमराज का हृदय भी मोम की तरह पिघल गया। अहं जर-जर हो गया। बच्चों की परस्पर ममता देखकर स्वयं लुढ़क गया। उन्हें विचार आया कि बच्चे चचेरे भाई हैं, फिर भी इनमें इतना गाढ़ा प्रेम है। मैं और उदितराज सगे सहोदर हैं, लेकिन मैं पैसे के नशे में चूर होकर छोटे भाई से घृणा करने लगा।

सुनु– ''कल मम्मी-पापा बात कर रहे थे कल संवत्सरी है, परसों उपवास का पारना कर ताऊजी-ताईजी से क्षमा याचना करने चलेंगे। आपने तो पहले ही बुला लिया।

मुनु– ''ताईजी! क्षमा-याचना क्यों की जाती है?''

ताईजी– ''बेटा! आठ दिन पर्युषण पर्व चलता है। उसका आठवाँ दिन क्षमा पर्व के रूप में मनाया जाता है। वर्षभर से मन-मुटाव हो जाता है, लड़ाई-झगड़ा भी हो जाता है, उसको समाप्त करने के लिए, पुन: मेल-जोल बढ़ाने के लिए क्षमा पर्व के दिन क्षमा-याचना की जाती है। क्षमा-याचना करने से राग-द्वेष नम्रता में परिवर्तित हो जाता है। मन में चैन-शान्ति की बन्सी बजने लगती है।''

उत्तमराज– ''क्षमा तो मैं तुम लोगों से माँगूँगा। मैंने तुम्हारे साथ अन्याय किया है। तुम तो निर्दोष हो। मैंने स्वार्थ और लोभ में लिप्त होकर तुमसे सम्बन्ध तोड़ दिया, लेकिन चारों भाइयों के विशुद्ध प्रेम ने मुझे प्रेम का मार्ग दिखा दिया।

आओ गोपाल, मुनु, सुनु, उदित, बहूरानी प्यार के झूले में झूल लें।'' रघु के मन की कली-कली खिल गई।

समाज के घुन

माँ!

पुन: विकल आवाज में माँ!

आवाज में माँ!

सीमा–''क्या हुआ बेटी?''

माँ ने देखा कि बेटी से बोला नहीं जा रहा है, स्तब्ध है, डरी हुई है। धड़कन तेज चल रही है। ललाट से पसीने की बूँदें टपक रही हैं। सीमा ने मान्या से पुन: पूछा–''इतनी घबराई हुई हो, क्या हुआ?''

मान्या–''माँ इन सन्त, स्वामी, बाबा, साधु आदि विशेषणों पर भ्रष्टाचारियों ने कालिख पोत दी है। आप तो पढ़ी-लिखी हो और अन्य बुद्धिजीवियों से अनुरोध करो कि सारी उपाधियाँ बदल डालें। मुझे इन उपाधियों से घृणा हो गई है।''

सीमा–''कैसी विचित्र बातें कर रही हो?''

मान्या–''इसका कारण बताते हुए मुझे लज्जा आ रही है, लेकिन बताना तो पड़ेगा।''

कॉलेज के रास्ते में बाबादेव का आश्रम है। वहाँ प्रतिदिन व्याख्यान होता है। वहाँ सुन्दर तम्बू लगा हुआ था। वह बहुत सजा हुआ था। मञ्च पर चाँदी की चद्दर से बना सोफा लगा हुआ, जिस पर बाबादेव बैठकर व्याख्यान देते हैं। पाण्डाल में दरी बिछाई हुई थी, जिस पर श्रद्धालु लोग बैठकर शान्ति-पूर्वक व्याख्यान सुनते हैं। मैं भी उधर से निकलती हूँ तो उनका रोचक भाषण मेरे कानों में पड़ता है। व्याख्यान सुनने के लिए मेरी भी जिज्ञासा हुई।

पाँच दिन पहले कॉलेज एक घण्टे पहले छूट गया। अवसर पाकर मैं भी व्याख्यान सुनने चली गई। व्याख्यान इतना प्रभावशाली था कि वहाँ से उठने का मन ही नहीं हो रहा था। बाबादेव का भाषा-शैली पर पूरा अधिकार और उसमें मिठास है कि सुनने वाले आत्म-विभोर हो जाते हैं। व्याख्यान समाप्त हो गया। सब लोग चले गए। मैं बाबादेव के पास गई और नमस्कार किया।

मान्या- ''मेरा नाम मान्या है। मैं स्नातक स्तर के द्वितीय वर्ष में पढ़ती हूँ। मुझे 26 जनवरी को भाषण प्रतियोगिता में भाग लेना है। भाषण का विषय 'गणतन्त्र प्रणाली' है। आप उस पर अच्छा-सा भाषण लिख सकते हैं तो मुझे लिख दीजिए। आपकी महती कृपा होगी।''

बाबादेव- ''लिख दूँगा बेटी।''

मान्या- ''कब तक लिख देंगे''

बाबादेव- ''कल दोपहर में ले जाना।''

मान्या- ''आपको समय हो तो मुझे भाषण देने की तैयारी करवा दीजिए।''

बाबादेव- ''चार-पाँच दिन में तैयारी करवा दूँगा।''

माँ, मैंने आपको नहीं बताया कि बाबादेव से भाषण लिखवाया है और तैयारी करने के लिए उनके पास जाऊँगी। यह सोच रखा था कि प्रतियोगिता में प्रथम आऊँगी तब उन्हें आश्चर्य दूँगी। दोपहर में भाषण की तैयारी के लिए जाती तो कहकर जाती कि मेरी सहेली रीनी के घर जा रही हूँ।

बाबादेव भाषण का वाचन करवाते थे। उन्होंने तन-मन से अच्छी तैयारी करवाई। आत्मविश्वास में वृद्धि होती गई। मैं बहुत प्रसन्न थी।

पाँचवें दिन उनका व्यवहार अलग लगा। वे शराब के नशे में धुत्त थे। मुँह से शराब की बू आ रही थी। अश्लील बातें करने लगे, मुझे अटपटा लगा, पर मुझे दाल में काला समझ में नहीं आया। मैं तो उन्हें आदर्श की दृष्टि से देखती थी। मेरे मन में उनके प्रति असीम श्रद्धा थी। मुझे 'बेटी' से सम्बोधित करते थे। यह सम्बोधन मुझे बहुत प्रिय लगता था।

मैं खड़ी-खड़ी भाषण सुना रही थी। बाबा सामने खड़े सुन रहे थे। जैसे ही भाषण समाप्त हुआ और उन्होंने अभद्र व्यवहार किया। मैंने उनको ऐसा धक्का दिया कि वे

तुरन्त उठ नहीं पाए। एक तो मोटे, दूसरा 'जूड़ो-कराटे' की युक्ति से गिराया। मैं स्कूल समय में 'जूड़ो-कराटे' का प्रशिक्षण ले चुकी हूँ। मैं वहाँ से ऐसी भागी कि एक क्षण में बाहर आ गई और बाइक पर सवार हो गई। मेरे भाग्य अच्छे थे इसलिए चौकीदार ने मुझे रोका नहीं, क्योंकि मैं पाँच दिन से जा रही थी। बाइक तेज चलाई और घर का रास्ता पकड़ा। मुझे ऐसा लगा कि कोई मेरा पीछा कर रहा है। मैंने मुड़कर नहीं देखा। साँस फूल गई। पछतावे की अग्नि हृदय में जल रही थी, इसलिए जनवरी माह में पूरी देह पसीने से भीग गई। ऐसी दशा हो रही थी कि काटो तो खून नहीं। मुझे ऐसा आभास होने लगा कि अब गिरी, कि अब गिरी। झूठ बोलकर बाबादेव के आश्रम गई थी। मैं कितने सुन्दर सपने संजोकर वक्तृत्व कला सीखने गई थी। सपना अधूरा रह गया। बची घृणित घटना। माँ को बताना होगा कि पाखण्डी साधु वेश में पर्दे के पीछे दुष्कर्म करते हैं। मान्या ने साहस बटोर कर पूरी घटना माँ को सुनाई।

माँ सीमा मान्या के लिए चाय बनाकर लाई। मान्या ने दो घूँट लिए और वह दृश्य याद आ गया और चाय का कप नीचे रख दिया।

सीमा–''बेटी, चाय तो पी ले।''

मान्या–''वह दुष्ट भी मुझे बेटी कहकर मीठे स्वर में बोलता था।''

हाय, सीमा ने मान्या की हथेलियों और पगतलियों में गरम तेल की मालिश की लेकिन हाथ-पाँव भय के कारण गरम हो ही नहीं रहे थे।

मान्या–''मैं क्या करूँ? मुझे बहुत डर लग रहा है।''

सीमा–''तू सुशील लड़की है। दुर्घटना का वीरता से सामना करके आ गई उसी में खुशी है।''

मान्या–''मैंने आपसे गुप्त रखकर, झूठ बोलकर कार्य किया इसीलिए भगवान ने मुझे सजा दी है।''

सीमा–''तूने मुझे आश्चर्य देने के लिए किया वह बात नहीं कही, बात उल्टी पड़ गई। इसकी दोषी मैं हूँ। मेरी लापरवाही और काम की व्यस्तता के कारण ऐसी घटनाओं के बारे में कभी चर्चा नहीं की। आए दिन समाचार पत्रों एवं टी.वी. में ऐसे काण्ड आते रहते हैं।''

मान्या–''पढ़ती तो मैं भी हूँ। मुझे तो उनकी भाषण-कला, दार्शनिक और

धार्मिक विचारों ने आकर्षित कर दिया। यह छलावा है, ऊपरी ढोंग है। भूल हो गई माँ।''

सीमा–''इन पाखण्डियों की वक्तृत्व कला के कारण लोग झाँसे में आ जाते हैं। सम्मोहित हो जाते हैं, लोगों को उनके भविष्य के बारे में बताते रहते हैं, इसलिए उनके पास भीड़ लगी रहती है। भोले-भाले लोग भाव-भक्ति और श्रद्धा लेकर जाते हैं। प्रसाद में मिलता है शोषण, मृत्यु और अश्लीलता। ये समाज के घुन हैं। जिस प्रकार मूँग मोठ को घुन अन्दर से खाकर खोखला कर देते हैं और खोल साबुत का साबुत रख देते हैं। वैसे ही ये पाखण्डी साधु हैं। जब पाप का घड़ा फूट जाता है तब इनकी धज्जियाँ उड़ जाती हैं फिर उन्हें बचाना कठिन हो जाता है। कुछ चाटुकार होते हैं, वे उनका पक्ष लेते हैं। वे तो अपराधी से भी घटिया लोग होते हैं जो भ्रष्टाचार को बढ़ावा देते हैं। व्यभिचारी स्वयं अपने आगे श्रेष्ठ उपमाएँ लगा लेते हैं।''

एक बार अमेरिका के शिकागो शहर में सर्वधर्म सम्मेलन हुआ। भारत की ओर से स्वामी विवेकानन्द गए। जब भारत की बारी आई तो विवेकानन्द मञ्च पर पहुँचे। उनकी भगवा-साधु वेशभूषा देखकर जनता का माथा ठनक गया कि यह अकिञ्चन भारतीय कैसा भाषण देगा। विवेकानन्द ने भाषण की पहली पंक्ति में जनता को मुग्ध कर दिया। तीन घण्टे भाषण चला। एक भी व्यक्ति भाषण के बीच में नहीं उठा। सम्मेलन के पश्चात् भी कितने ही महीनों तक भाषण के लिए आमन्त्रित किया।

भाषण के पश्चात् एक अमेरिकन युवती उनके पास आई, कहने लगी-''विवेक आप मेरे से विवाह कर लीजिए।''

विवेकानन्द ने कहा-''आप मेरे से विवाह करना क्यों चाहती हो?''

युवती-''मुझे आप जैसा तेजस्वी, कुशाग्र और सुन्दर पुत्र चाहिए।''

विवेकानन्द ने कहा-''मुझे ही अपना बेटा बना लीजिए। आप मेरी माँ, और मैं आपका बेटा''

ऐसे महान् पुरुषों के स्वामी की उपाधि लगना स्वाभाविक है।

भगवान महावीर ने सत्य, अहिंसा, अचौर्य, ब्रह्मचर्य और अपरिग्रह जैसे सिद्धान्त दिए जो आज के परिप्रेक्ष्य में अतिआवश्यक हैं।

हमारे देश के राष्ट्रपिता श्री मोहनदास कर्मचन्द गाँधी को महात्मा की उपाधि दी

गई, क्योंकि वे देश की स्वतन्त्रता के लिए अनेक बार जेल गए। जेल के कष्ट सहन किए। सत्य, अहिंसा के बल से भारत को आजाद करवा दिया। वे त्यागी थे, अल्पाहारी थे, अपरिग्रही थे।

उपर्युक्त महापुरुषों के जीवन से तो जीने की कला मिलती है। उच्च कोटि की प्रेरणा और संस्कार मिलते हैं।

सीमा–''मान्या, आज की दुर्घटना से तो सबक लेना है। दुश्चरित्र लोगों से बचने के लिए मानव, समाज और सरकार सभी को सतर्क रहने की आवश्यकता है।''

मुझे तो गर्व है कि तू पाखण्डी के चंगुल में फँसकर भी सुरक्षित आ गई।

आज से मैंने यह कदम उठाया है कि कॉलेज में सप्ताह में एक दिन, 15 मिनट की कक्षा लड़कियों के आत्मरक्षण की ली जाए। विभिन्न प्रकार के प्रशिक्षण भी दिए जाएँ। उन्हें ऐसे संस्कार दिए जाएँ कि वे हर परिस्थिति का सामना करने में सक्षम हो जाएँ।

पड़ोसिन

सुहानी-सुरेन्द्र को अचानक श्वास लेने में तकलीफ होने लगी तो अस्पताल जाने का निर्णय लिया। रावी और रम्य को पड़ोसिन मीरां के यहाँ छोड़ दिया। घर की चाबी भी उन्हें सम्भलवा दी और कहा, ''चाबी अपने पास में रखना। हम जल्दी जाँच करवा कर आ रहे हैं।'' लॉकडाउन के कारण शहर की सभी सड़कें सुनसान पड़ी थीं। दुकानें, स्कूल, कॉलेज, मॉल सब बन्द पड़े थे। स्थान-स्थान पर पुलिस का कड़ा पहरा था। मास्क के बिना चलने वालों पर 200/- का चालान लगाया गया था। सुहानी-सुरेन्द्र की पूछताछ होने पर उन्होंने बताया हमारी तबीयत ठीक नहीं है। हम अस्पताल जा रहे हैं। दोनों ने मास्क लगा रखा था और सोशल डिस्टेन्स से चल रहे थे। घर से अस्पताल बहुत पास में था। पुलिस ने उन्हें नहीं रोका।

डॉक्टरी जाँच से पता चला कि दोनों कोरोना महामारी से संक्रमित हैं, उन्हें आइसोलेशन वार्ड में भर्ती कर लिया गया था।

सुरेन्द्र ने कहा-''डॉक्टर साहब! इस शहर में मेरे कोई परिजन नहीं रहते हैं, कुछ समय के लिए मुझे छोड़ दीजिये। मेरे दो छोटे बच्चे हैं, उनसे मिलकर दोनों को पड़ोसिन को सौंपकर आ जाऊँगा।''

डॉक्टर साहब ने कहा-''अब आप यहाँ से नहीं जा सकते हैं, आप फोन से बात कर लीजिए।''

सुरेन्द्र ने मीरां पड़ोसिन को फोन लगाया।

सुरेन्द्र-सुहानी-''मीराँ जी! हम कोरोना वायरस से संक्रमित हैं, हम घर पर नहीं आ सकते हैं। रावी-रम्य को आपके पास ही रखना। हम आपको कष्ट दे रहे हैं।

रावी-रम्य से बात करवा दीजिए।'' कुछ सामान चाहिए तो घर से ले लेना। रावी-रम्य ने अपने मम्मी-पापा से बात की।

रावी-रम्य- ''पापा-मम्मी! आप जल्दी आना।'' बड़ी माँ हमें बहुत प्यार से रखती हैं।

सुहानी- ''हम जल्दी आएँगे, तुम खुश रहना।''

सुरेन्द्र-सुहानी बिहार के रहने वाले थे। उनका अन्तरजातीय प्रेम विवाह था, मातृपक्ष और पितृ पक्ष दोनों उनसे रुष्ट थे। दोनों पक्ष उनसे सम्बन्ध तोड़े हुए थे। सुरेन्द्र अपने पिता को पत्र लिखता रहता था और जयपुर आने के लिए विनति करता था। रावी जन्मी तब पिता को सूचना दी कि आप अपनी पौत्री को आशीर्वाद देने आइये। सूचना में उत्तर मिला कि तुम्हारे-हमारे बीच में कोई रिश्ता नहीं है। मुझे कलमुँही का मुँह नहीं देखना है। बार-बार फोन कर के हमारा जी क्यों दु:खाते हो?

सुरेन्द्र-सुहानी अपनी प्यारी बिटिया के लिए कलमुँही शब्द सुनकर उदास हो गए। वे तो उसे निहारते-निहारते भी नहीं थकते थे। दोनों नौकरी करते थे। घर की चाबी मीरां को देकर जाते थे ताकि बच्चे स्कूल से आकर ताला खोल लें। अधिकतर समय बच्चे मीरां के घर रहते थे। बच्चे मीरां को 'बड़ी माँ' से सम्बोधित करते थे। मीरां यह अपना नाम सुनकर फूले न समाती थी। मीरां के बच्चा नहीं था।

सुरेन्द्र-सुहानी को कोरोना लक्षण का पता नहीं लगा और कोरोना वायरस तृतीय स्तर पर चला गया। पति-पत्नी में असीम प्रेम था। दोनों की कमाई अच्छी थी। घर का मकान था। सभी प्रकार की सामग्री से भरा हुआ था।

अस्पताल से मीरां के लिए फोन आया कि सुहानी का निधन हो गया और दाह संस्कार भी कर दिया गया है। मीरा अशुभ समाचार सुनकर फूट-फूटकर रोने लगी। बच्चों ने पूछा-''बड़ी माँ क्यों रो रही हो?''

बड़ी माँ ने कहा- ''मेरे पेट में पीड़ा हो रही है।''

रावी-रम्य कहने लगे- ''आप सो जाओ। हम काम कर लेंगे।''

सुरेन्द्र को कोरोना तृतीय स्तर पर तो था ही और सुहानी की मृत्यु, वह सहन न कर सका और उसका भी देहावसान हो गया। तीसरे दिन पुन: फोन आया कि हम सुरेन्द्र को बचा न सके। उनका अन्तिम संस्कार कर दिया गया है।

मीरां के आँसुओं का बाँध टूट गया। बच्चे ऑन-लाइन पढ़ रहे थे। मीरां का चिन्तन चला। बच्चे माता-पिता विहीन हो गए हैं। इतने छोटे हैं, कब बड़े होंगे। इनको यह दुःखद समाचार कैसे बताऊँ? मैं स्वयं ही सम्भल नहीं पा रही हूँ, उन्हें कैसे सम्भालूँगी। मुझे सुरेन्द्र के पिता को सूचना देनी होगी।

मीरां ने सुरेन्द्र के पिता को फोन लगाया।

"श्रीमान् जी! आपको सूचित करने का साहस मेरे में नहीं रहा है, लेकिन पड़ोसिन के नाते बताना तो होगा। सुरेन्द्र और सुहानी कोरोना से संक्रमित हो गए थे। वे अस्पताल में भर्ती हो गए थे। कोरोना तृतीय स्तर पर पहुँच गया था। डॉ. साहब का मोबाइल आया कि अथक प्रयास के पश्चात् भी हम सुरेन्द्र और सुहानी को बचा न पाए। पहले सुहानी का देहान्त हुआ और तीसरे दिन सुरेन्द्र का भी हो गया। अन्तिम संस्कार भी अस्पताल द्वारा ही हुआ। दोनों बच्चों की फोटो भी आपके मोबाइल में डाल दी है। बच्चे मेरे पास हैं। आप चिन्ता न करें। उन्हें दुःखद घटना नहीं बताई गई है।"

पिता अशुभ समाचार सुनकर अत्यन्त दुःखी हुए। अश्रुधारा बहने लगी, रुकने का आधार नहीं रहा। अब उनके पास आँसू, स्मृतियाँ और पछतावा ही शेष बचे थे।

सुरेन्द्र के पिता ने मीरां पड़ोसिन को मोबाइल लगाया। "मैं आपका आभारी हूँ। आप मेरे बच्चों को रख रही हैं। आवागमन की सेवाएँ प्रारम्भ होते ही बच्चों को लेने आऊँगा। क्रोध में अन्धा हो गया था। सच्चे सुख को ठुकरा कर पछतावे का दुःख पाल लिया है। इन भोले बच्चों की फोटो देखकर मेरा हृदय परिवर्तित हो गया है। सुखभरा समय बीत गया। उसे पाने के लिए घोड़े भी नहीं पहुँच सकते हैं।"

जब मीरां ने सुरेन्द्र के पिता से बात की तब रावी ने यह पंक्ति सुन ली कि सुहानी-सुरेन्द्र संसार में नहीं रहे। ये शब्द सुनकर रावी बिलख-बिलखकर रोने लगी और रम्य भी रोने लगा। दोनों बड़ी माँ से चिपक गए। रावी- "बड़ी माँ, मम्मी-पापा कहकर गए थे कि हम जल्दी आएँगे। वे झूठ नहीं बोलते हैं। हम उनके बिना नहीं रह सकते हैं। बड़ी माँ उनके पास चलो। चलो माँ चलो।"

मीरां मौन हो गई। इन नादान एवं दया के पात्रों को कैसे समझाऊँ? मैं क्या उत्तर दूँ? मैं स्वयं अत्यधिक दुःखी हूँ। इनके सामने रो भी नहीं सकती हूँ, अन्दर ही अन्दर घुट रही हूँ। इनको कैसे चुप रखूँ? सुरेन्द्र-सुहानी को मैंने जन्म नहीं दिया, लेकिन मेरे लिए जन्म वालों से कम नहीं थे। उनको मेरे पर कितना विश्वास था। उनको कैसे भुला

पाऊँगी? लॉक-डाउन खुलते ही बच्चों को इनके दादा ले जाएँगे तो मेरा जीवन दूभर हो जाएगा। बच्चे यहाँ रहते तो इनके सहारे जीवन अच्छा कट जाता।

मीराँ ने बच्चों को गोद में सुलाया, सहलाया, समझाया और चुप किया। उनके लिए उनके पसन्द का खाना बनाया, पास में बिठाया और मुँह में ग्रास दिया, लेकिन वे खा नहीं पा रहे थे। उनको जबरदस्ती खाना खिलाया। उन्हें नीन्द दिला दी।

18 मई से 31 मई तक के लॉक-डाउन में विशेष ट्रेनों का चलना प्रारम्भ हुआ। रावी के दादा-दादी उनको लेने मीरां के घर आ गए। मीरां ने उनका स्वागत किया। पानी पिलाया पश्चात् चाय-नाश्ता लेकर आई। बच्चों के लिए दादा-दादी खिलौने, टॉफियाँ लाए थे। दादा-दादी ने बच्चों को गोद में बिठाया तो उन्हें स्वर्ग जैसा सुख का आभास हुआ और तुरन्त विचार आया कि इन बच्चों को देखकर मुझे प्रतिदिन मरना पड़ेगा। हे भगवन्! दिवंगत आत्माओं को सान्त्वना प्रदान करें। रम्य के दादा-दादी उन्हें याद करके रोते रहे।

मीरां-''भाई साहब शान्त रहिए। भगवान के आगे किसी का जोर नहीं चलता है। मैंने बच्चों को बड़ी कठिनाई से चुप रखा है। इन्होंने खाना-पीना बहुत कम कर दिया है, उदास बैठे रहते हैं। इनकी बचपन की मस्तियाँ लुट गईं। ये होनहार बच्चे हैं।

मीरां ने खाने की थाली लाकर रखी और पास में बैठकर उन्हें खिलाया। वे रो रहे थे, उन्हें ढाँढ़स बँधवाया और आगे की सुध लेने के लिए कहा। सुरेन्द्र के पिता ने कहा-''आप इन्हें मेरे साथ भेज दीजिए। मैं इन्हें बहुत प्यार से रखूँगा।''

मीरां-''मैं इन बच्चों को बहुत प्यार करती हूँ। इन्हें छोड़ना नहीं चाहती हूँ, लेकिन इन पर पहला अधिकार आपका है। आप चार-पाँच दिन इनके साथ रहिए, तब चलने के लिए इनका मानस बनेगा।''

बिहार जाने की घड़ी आ गई। मीरां ने चाबी लेकर सुरेन्द्र का घर खोला और पूरा घर सुरेन्द्र के माता-पिता को दिखाया। कमरे में सुरेन्द्र के परिवार की बड़ी सुन्दर फोटो लगी हुई थी। रम्य की दादी फोटो देखते ही मूर्च्छित हो गई। 8-10 मिनट से चेतना आई। बच्चों के पहनने के कपड़े, पाठ्य-सामग्री और खिलौने पैक किये। मीरां ने खाना बनाकर साथ डाला, पानी से भरकर बोतलें तैयार कीं। ट्रेन आने का समय हो गया। टैक्सी मँगवाई गई। टैक्सी में सामान रखा और पाँचों-जन उसमें बैठ गए। स्टेशन आ गया, सब टैक्सी से नीचे उतर गए। रावी ने कपड़ों का बैग उठाया और रम्य ने खाने

का सामान उठाया। सारा सामान लेकर गाड़ी में बैठ गए। रम्य ने बड़ी माँ से कहा– ''आप गाड़ी में बैठो ना, पापा के घर चलेंगे।'' मीरां ने कहा– ''मैं बाद में आऊँगी।''

मीरां ने सुरेन्द्र के पापा को चाबी सम्भलवा दी। बच्चे दादा–दादी के पास बैठ गए, किसी भी प्रकार की हलचल नहीं, मूर्तिवत् हो गए। गाड़ी छुक–छुककर चलने लगी तो बड़ी माँ को प्रणाम किया और हाथ हिलाते रहे। बच्चे, बेचारे, बेचारे हो गए। कोरोना वायरस ने हँसती खेलती जिन्दगी छीन ली।

''रम्य दादा से बार–बार कहता, अब पापा का घर आएगा। पापा–मम्मी मिलेंगे।''

पटना शहर आ गया। गाड़ी रुकी। उन्होंने टैक्सी की, और घर पहुँच गए। घर की घण्टी बजाई और चाचा–चाची सामने आए। बच्चों को देखते ही उनका जी बैठ गया। पापाजी हमारे लिए आफत की पुड़िया क्यों लाए?

दादी ने बच्चों को नहलाया–धुलाया। उन्हें खाना खिलाया। रात को अपने पास सुलाया।

रम्य– ''मम्मी–पापा कहाँ हैं? मुझे मिलना है।'' दादी कुछ नहीं बोली। उसने कहानी कहना आरम्भ कर दिया।

दिन बीतते गए, लेकिन रावी–रम्य रोते रहते थे। उन्हें यहाँ सब पराए–पराए लगते थे। चाची के एक लड़की और एक लड़का था। वह अपने बच्चों को उनके साथ खेलने नहीं देती थी, आपस में बात करना भी मना था। वह कहती थी कि इनसे बोलने से, छूने से कोरोना संक्रमित हो जाओगे।

एक दिन रम्य खिलौने से खेल रहा था, तभी सर्वेश (चचेरा भाई) आया और खिलौना छीनकर ले गया। रम्य बहुत रुष्ट हुआ और दादा को बताया कि सर्वेश मेरा खिलौना ले गया है।

दादा ने आवाज लगाई– ''सर्वेश, भैया को खिलौना दे दे। मैं दूसरा खिलौना लाकर दूँगा।''

चाची– ''बाबा! सर्वेश खिलौने से खेल रहा है। मैं उससे लूँगी तो वह रोएगा। मैं उसे रुला नहीं सकती। क्यों रे रम्य! रोटी मेरी खाता है और दादा के पास जाकर चुगली करता है।''

रम्य– ''चाची यह खिलौना मुझे बहुत अच्छा लगता है। आप दूसरा ले लीजिए।''

चाची–''निगोड़ा ज़बान करता है जीभ काट दूँगी।''

दादा यह बातें सुन रहे थे। अन्दर पीड़ा चुभन हो रही थी। प्रतिदिन दोनों बच्चे कहते, घर चलो। घर में मम्मी–पापा की फोटो लगी हुई है, हम उनसे बातें करेंगे।

दादा–दादी विवश थे। चाची पैसे वालों की बेटी है। घर में उसका राज्य था।

एक दिन बर्तन साफ करने वाली बाई अवकाश पर थी। घर के सारे झूठे बर्तन रावी को माँजने को दिए। दादा–दादी को बड़ा तरस आया। दूध जैसे गोरे कोमल हाथ, इतने ढेर सारे बर्तन कब तक साफ करती रहेगी?

दादी–''रावी तू दूर हो जा, मैं साफ कर लूँगी।''

बहू–''माँ जी, मैंने आपसे कभी बर्तन साफ नहीं करवाए। रावी आठ साल की है, छोटी नहीं है। अब आपको पौत्री पर इतनी दया आ रही है। इतने वर्ष क्या हुआ था, जब भाई साहब हमेशा फोन करते थे कि आप जयपुर आओ, साथ रहेंगे। आप तो मेरी छाती पर मूँग दलते रहे।

रावी बर्तन साफ कर रही थी, एक काँच की प्लेट हाथ से फिसल कर टूट गई। फूटने की आवाज सुनते ही चाची दौड़कर आई उसके गाल पर ऐसी चिकोटी भरी कि खून बहने लगा, क्योंकि उसके नाखून चुभ गए। चिकोटी की पीड़ा इतनी हुई कि वह सहन नहीं कर सकी, चिल्लाई मम्मी, मम्मी! वह थोड़ी–सी गलती पर चिकोटियाँ भरती रहती थी। वह कभी कुछ नहीं बोली। दादी ने खून पोंछा और डिटॉल लगाया।

चाची पड़ोस में गई हुई थी। सर्वेश रम्य के पास और दोनों भागा–भागी करने लगे। खेल में सर्वेश दीवार से टकराया, ललाट सूज गया। चाची के घर आते ही सर्वेश ने कहा–''मम्मी रम्य ने धक्का मारा इसलिए चोट आ गई।''

चाची सर्वेश और रम्य को पकड़ कर दादा–दादी के पास ले गई। उन्हें बताया कि आपके लाड़ले पौत्र ने सर्वेश को ऐसा धक्का मारा कि ललाट सूज गया और खून भी जम गया है। उनके सामने रम्य को ऐसा पीटा कि श्वास रुक गई। रावी थरथराने लग गई, रोती–रोती भाई को गले लगा कर दोनों संकुचित होकर बैठ गए।

रम्य–''दादा! मैंने धक्का नहीं मारा। वह दीवार से टकरा गया था। दादी! मम्मी के घर चलो। बड़ी माँ से मिलना है। हमें वहाँ कोई नहीं मारता है।

दादा–दादी से यह भयंकर दृश्य देखा नहीं गया। उनके जीवन में नई बहार आई

थी, वह उनके भाग्य में लिखी हुई नहीं थी। दूसरे ही दिन दादा बच्चों को लेकर जयपुर पहुँच गए। दादा घर खोल रहे थे उसी समय बच्चों ने जोर से आवाज लगाई बड़ी माँ हम आ गए। बड़ी माँ आवाज सुनते ही जल्दी से बाहर आ गई। बच्चों ने उनको हाथों में ऐसा कसा कि उन्हें अलग करना कठिन हो गया। बड़ी माँ चाची हमें बहुत मारती है। हम उनके घर नहीं जाएँगे।

दादाजी निपट कर बड़ी माँ के घर आ गए। सबने खाना खा लिया तत्पश्चात् मीरांजी के साथ बातें होने लगीं। दादाजी ने कहा-"मीरां जी! आपके सामने घर की बातें बताने में लज्जा आ रही है, मैं विवश हूँ। बेटा-बहू इनको साथ में रखने के पक्ष में नहीं हैं।"

बेटा-बहू ने कहा-"दोनों बच्चों का पालन-पोषण करो। इन्हें पढ़ाओ-लिखाओ पश्चात् शादी करो, ऐसा पंगा मैं नहीं लेता हूँ। रम्य को घर का हिस्सा दो। आपकी सेवा तो हम करते हैं। इनके ननिहाल वालों का भी पत्र नहीं आया, वे भी इन्हें रखने के पक्ष में नहीं हैं। आप इन्हें अनाथ-आश्रम में डाल दीजिए। ये शब्द सुनकर मेरा जी दहल गया। मैं चेतना-शून्य हो गया। बड़ी आकांक्षा से साथ रहने के लिए ले गया था। ऐसे सभ्य, सुन्दर और सुशील बच्चे कहाँ मिलेंगे? मैं इनका सब कुछ होते हुए भी कुछ नहीं हूँ। सौभाग्यशालिनी हैं आप, कुछ न होते हुए भी सब कुछ हो।"

मीरां-"प्रेम का सम्बन्ध अटूट होता है, उसमें लेन-देन एवं ऊँच-नीच भाव नहीं रहता है।"

दादाजी-"मीरांजी! इन बच्चों को कहाँ रखना है, इसका निर्णय आप और मुझे ही लेना है। इनको हॉस्टल में डालना चाहता हूँ। सुरेन्द्र का घर किराए पर दे देंगे तो किराया आ जाएगा, कुछ व्यय मैं वहन कर लूँगा। संरक्षक आपको रखेंगे ताकि आप समय-समय पर इनकी देख-रेख कर लेंगी।"

मीरां-"भाई साहब मेरे पर भरोसा हो तो मेरे भरोसे छोड़ दीजिए। मेरे इन बच्चों के अतिरिक्त कोई नहीं है। सुरेन्द्र का घर रम्य के नाम करवा दीजिए। मैं अपना घर रावी को दूँगी। इनका जीवन सुखमय हो जाय, यही मेरी शुभकामना है। सुरेन्द्र का घर आपका घर है, आप भाभीजी को यहाँ ले आएँ। मैं सब व्यवस्था कर लूँगी। यही मेरी कर्मभूमि है।"

कोरोना महामारी में डॉक्टर, नर्स-स्टॉफ, पुलिस, सफाई कर्मचारी एवं अन्य संस्थाएँ तन, मन और धन से सेवाएँ दे रहे हैं। कुछ लोग खाने के पैकेट बनाकर भूखों की भूख मिटाते हैं। प्यासों को पानी की बोतलें देकर प्यास बुझाते हैं। महिलाएँ मास्क बनाकर नि:शुल्क बाँटती हैं। आप उचित समझें तो इन बच्चों को मुझे दे दीजिए। मैं इन्हें पालकर बहती गंगा में हाथ धो लूँ। मैं जानती हूँ ये अन्य के पास खुश नहीं रह सकेंगे।

दादाजी– ''मैं भी यही चाहता हूँ कि आप इन बच्चों को रखिए। यदि आप में खोट होती तो घर की चाबी मुझे नहीं देती और दोनों के देहावसान की सूचना नहीं करती। यह कितनी बड़ी बात है। दादाजी बच्चों को बुलाकर बड़ी माँ की गोद में बिठा देते हैं। मैं आपका आभारी हूँ। किन शब्दों से आपके गुणगान करूँ।''

मीरां– ''भाई साहब मैं आपकी कृतज्ञ हूँ। आपने मेरा जीवन लौटा दिया।''

नाम	:	कमला हणवन्तमल सुराणा
जन्मतिथि	:	सन् 1938
जन्म स्थान	:	जोधपुर
शिक्षा	:	स्नातकोत्तर (हिन्दी साहित्य), बी.एड.
शिक्षा स्थान	:	जोधपुर
सम्प्रति	:	स्वतन्त्र लेखन
पुरस्कार	:	सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल द्वारा जिनवाणी श्रेष्ठ रचना पुरस्कार अगस्त, 2015

सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल
के विविध सेवा सोपान

जिनवाणी हिन्दी मासिक पत्रिका का प्रकाशन

जैन इतिहास, आगम एवं अन्य सत्साहित्य का प्रकाशन

श्री जैन रत्न आध्यात्मिक शिक्षण संस्थान
(महिला छात्रावास, मानसरोवर, जयपुर) का संचालन

अखिल भारतीय श्री जैन विद्वत् परिषद का संचालन

उक्त प्रवृत्तियों में दानी एवं प्रबुद्ध चिन्तकों के
रचनात्मक सक्रिय सहयोग की अपेक्षा है।

सम्पर्क सूत्र

मंत्री – सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल

सुबोध बॉयज सीनियर सैकेण्डरी स्कूल के ऊपर
बापू बाजार, जयपुर-302003 (राजस्थान)
दूरभाष : 0141-2575997
ई-मेल : sgpmandal@yahoo.in